कथा-कलश
भाग 1

भारत का संविधान

उद्देशिका

हम, भारत के लोग, भारत को एक [1][संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य] बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को :

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय,
विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म
और उपासना की स्वतंत्रता,
प्रतिष्ठा और अवसर की समता

प्राप्त कराने के लिए,
तथा उन सब में

व्यक्ति की गरिमा और [2][राष्ट्र की एकता
और अखंडता] सुनिश्चित करने वाली **बंधुता**

बढ़ाने के लिए

दृढ़संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवंबर, 1949 ई० **को एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।**

1. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) "प्रभुत्व-संपन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) "राष्ट्र की एकता" के स्थान पर प्रतिस्थापित।

भाग 4 क

मूल कर्तव्य

51 क. **मूल कर्तव्य** – भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह –

(क) संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्र ध्वज और राष्ट्र गान का आदर करे;

(ख) स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय मे संजोए रखे और उनका पालन करे;

(ग) भारत की प्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण रखे;

(घ) देश की रक्षा करे और आह्वान किए जाने पर राष्ट्र की सेवा करे;

(ङ) भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध हैं;

(च) हमारी सामासिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्व समझे और उसका परिरक्षण करे;

(छ) प्राकृतिक पर्यावरण की जिसके अंतर्गत वन, झील, नदी, और वन्य जीव हैं, रक्षा करे और उसका संवर्धन करे तथा प्राणि मात्र के प्रति दयाभाव रखे;

(ज) वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करे;

(झ) सार्वजनिक संपत्ति को सुरक्षित रखे और हिंसा से दूर रहे;

(ञ) व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत प्रयास करे जिससे राष्ट्र निरंतर बढ़ते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊंचाइयों को छू ले।

कथा-कलश
भाग 1

केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के अन्तर्गत **'बी'** पाठ्यक्रम के रूप में हिन्दी पढ़ने वाले विद्यार्थियों के लिए नवीं कक्षा की सहायक पाठ्यपुस्तक

संपादक
रामजन्म शर्मा
चन्द्रा सदायत

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING.

प्रथम संस्करण
अप्रैल 1999 चैत्र 1921

चौथा पुनर्मुद्रण
अप्रैल 2003 चैत्र 1925

PD 50T DRH

एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन विभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस	108, 100 फीट रोड, होस्डेकेरे	नवजीवन ट्रस्ट भवन	सी.डब्लू.सी. कैंपस
श्री अरविंद मार्ग	हेली एक्सटेंशन बनाशंकरी III इस्टेज	डाकघर नवजीवन	निकट : धनकल बस स्टॉप,
नई दिल्ली 110 016	बैंगलूर 560 085	अहमदाबाद 380 014	पनिहटी, कोलकाता 700 114

रु. 10.00

प्रकाशन विभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविन्द मार्ग, नई दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा शगुन आफसेट, 132, मौहम्मदपुर नई दिल्ली-110 066 द्वारा मुद्रित।

आमुख

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के तत्त्वावधान में विद्यालयी स्तर पर विभिन्न शैक्षिक विषयों के लिए पाठ्यपुस्तकों आदि के निर्माण का कार्य लगभग ढ़ाई दशकों से भी अधिक समय से हो रहा है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति लागू होने के साथ ही ऐसी शिक्षण-सामग्री की आवश्यकता का अनुभव किया जाने लगा जो नई शिक्षा नीति के उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक हो। छात्रों के सर्वांगीण विकास पर नई शिक्षा नीति में विशेष बल दिया गया है। नई शिक्षा नीति में भारत के राष्ट्रीय जीवन के लिए आवश्यक कुछ महत्त्वपूर्ण मूल्यों को केंद्रिक शिक्षाक्रम के रूप में स्थान दिया गया है। साथ ही राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अंतर्गत त्रिभाषा-सूत्र पर विशेष बल दिया गया है। इसके अनुसार अखिल भारतीय संदर्भ में हिन्दी का पठन-पाठन प्रथम भाषा, द्वितीय भाषा तथा तृतीय भाषा के रूप में प्रस्तावित है—

प्रथम भाषा के रूप में पहली से दसवीं कक्षा तक;
द्वितीय भाषा के रूप में छठी कक्षा से दसवीं कक्षा तक; तथा
तृतीय भाषा के रूप में सातवीं कक्षा से दसवीं कक्षा तक।

परिषद् में इस दृष्टि से भाषा अध्यापन के लिए विभिन्न स्तरों की पाठ्यपुस्तकें तैयार की गई हैं। परिषद् द्वारा द्वितीय भाषा के रूप में पढ़ाई जाने वाली पाठ्यपुस्तकों की दो श्रृंखलाएँ इसके पूर्व तैयार की गई थीं। नवीं, दसवीं कक्षा की पाठ्यपुस्तकों के निर्माण की इस नई श्रृंखला में निम्नलिखित बातों पर विशेष बल दिया गया है :

(क) ऐसी पाठ्यसामग्री एवं शैक्षिक क्रियाओं का समावेश जिनसे विद्यार्थियों में संविधान में निर्दिष्ट मूल कर्तव्यों का पालन, सभी के लिए सभी मानव अधिकार के प्रति आस्था उत्पन्न हो और उनमें तर्कसंगत वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास हो ।

(ख) पाठ्यचर्या एवं पाठ्यसामग्री भारतीय जीवन-परिस्थितियों तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश पर आधारित हों और उनमें वांछित भावी विकास की दिशा भी परिलक्षित हो ।

(ग) पाठ्यपुस्तकें बालकों के भावात्मक एवं बौद्धिक उत्कर्ष, चरित्र-निर्माण तथा स्वस्थ मनोवृत्ति के विकास की दृष्टि से प्रेरणादायी सिद्ध हों, उनके द्वारा विद्यार्थियों में स्वयं शिक्षा एवं अधिकाधिक ज्ञानार्जन की उत्कंठा जागृत हो और वे निर्धारित पाठ्य-विषय तक ही सीमित न रहकर विशद एवं व्यापक अध्ययन के लिए जिज्ञासु तथा तत्पर बने रहें ।

(घ) यह पुस्तक विद्यार्थियों में पठन रुचि विकसित करने के लिए तैयार की गई है। पूरक पठन की इस पुस्तक में विद्यार्थियों की रुचि के अनुसार कहानियाँ संकलित की गई हैं। इन कहानियों को पढ़ने के साथ ही उन्हें इस प्रकार की अन्य सामग्री को पढ़ने की प्रेरणा मिलेगी । इसी आशा से इस पूरक पठन की पुस्तक को तैयार किया गया है ।

इस कार्य को सभी दृष्टियों से परिपूर्ण एवं प्रामाणिक बनाने के लिए राष्ट्रीय स्तर के विषय-विशेषज्ञों, अधिकारी विद्वानों एवं शिक्षकों का सहयोग प्राप्त किया गया ।

परिषद् के सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी शिक्षा विभाग के प्रो. रामजन्म शर्मा और डा. चन्द्रा सदायत ने पुस्तक का संपादन किया है। सुश्री पूनम कुकरेजा ने पुस्तक की पाण्डुलिपि को तैयार करने में काफी सहायता की। मैं अपने इन सभी सहयोगियों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ ।

जिन कृति लेखकों ने अपनी रचनाएँ इस पुस्तक में सम्मिलित करने की अनुमति दी है, उनके प्रति हम विशेषरूप से अनुगृहीत हैं ।

आशा है, द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी पढ़ने वाले छात्रों की भाषिक तथा साहित्यिक रुचियों के विकास की दृष्टि से यह पुस्तक उपादेय सिद्ध होगी। इसके परिष्कार की दृष्टि से सुविज्ञजनों द्वारा भेजे गए सुझावों और परामर्श का हम सदा स्वागत करेंगे ।

अशोक कुमार शर्मा

निदेशक

नई दिल्ली

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

कृतज्ञताज्ञापन

इस पुस्तक के निर्माण में कृपापूर्ण योगदान के लिए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् निम्नलिखित विद्वानों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करती है :

प्रो. नामवर सिंह

प्रो. सूरजभान सिंह

प्रो. ई. विश्वनाथ अय्यर

प्रो. दिलीप सिंह

डा. मानसिंह वर्मा

डा. जयपाल सिंह तरंग

डा. कमल सत्यार्थी

डा. पूरन सहगल

डा. राजेश कुमार

डा. महेन्द्रपाल शर्मा

श्री एम. के. वेलायुधन नायर

श्रीमती रजनी शर्मा

श्रीमती बी. विजयम्मा

प्रो. निर्मला जैन

प्रो. वी. आर. जगन्नाथन

श्री निरंजन कुमार सिंह

प्रो. एन. सुन्दरम्

प्रो. रामवीर सिंह

प्रो. हरिमोहन

डा. आरसू

डा. हीरालाल बाछोतिया

डा. एच. बालसुब्रहमण्यम्

डा. रामगोपाल वर्मा

डा. (श्रीमती) संतोष माटा

श्रीमती एस. चन्द्रिका कुमारी

विषय-सूची

गांधी जी का जन्तर

तुम्हें एक जन्तर देता हूं। जब भी तुम्हें सन्देह हो या तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे, तो यह कसौटी आजमाओ :

जो सबसे गरीब और कमजोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शकल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा। क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुंचेगा? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा? यानि क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है?

तब तुम देखोगे कि तुम्हारा सन्देह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है।

हिन्दी कहानी : एक परिचय

मनुष्य के मन में किस्सा कहानी सुनने-सुनाने की जो स्वाभाविक वृत्ति है उसने ही बीसवीं शताब्दी के आरंभिक वर्षों में आधुनिक कहानी का रूप ग्रहण किया। बीसवीं शताब्दी के पहले दशक में **सरस्वती** में जो कहानियाँ प्रकाशित हुईं उन्होंने ही हिन्दी कहानी को नया रूप और आकार दिया। इन प्रारंभिक कहानियों में प्रमुख हैं – किशोरीलाल गोस्वामी की **इन्दुमती** (1900), भगवान दास की **प्लेग की चुडैल** (1902), रामचन्द्र शुक्ल की **ग्यारह वर्ष का समय** (1903) और **बंगमहिला**, राजेन्द्रबाला घोष की **दुलाईवाली** (1907)। इसी क्रम में आगे चलकर कुछ और उल्लेखनीय कहानियाँ प्रकाशित हुईं जिनमें विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक' की **रक्षा-बंधन** (1913), चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की **उसने कहा था** (1915) और प्रेमचन्द की **पंच-परमेश्वर** (1916)। **सरस्वती** पत्रिका के अलावा जयशंकर प्रसाद द्वारा संपादित **इन्दु** पत्रिका का भी हिन्दी कहानी के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान है। इस पत्रिका में प्रकाशित जयशंकर प्रसाद की **ग्राम** (1911) और राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह की **कानों में कंगना** (1913) उल्लेखनीय कहानियाँ हैं।

इस प्रकार हिन्दी-कहानी के आरंभ में ही प्रेमचंद, गुलेरी, कौशिक और जयशंकर प्रसाद जैसे कहानीकार मिल गए थे, जिनके सधे हाथों में पहुँचकर हिन्दी-कहानी का कलात्मक विकास हुआ।

गुलेरी ने केवल तीन कहानियों की रचना की – **सुखमय जीवन**, **बुद्धू का काँटा** और **उसने कहा था**। इसमें **उसने कहा था** उनकी श्रेष्ठ कहानी है। इस कहानी में पात्रों

का तीव्र मानसिक द्वंद्व और द्रुत घटनाचक्र का प्रभावशाली चित्रण हुआ है ; किंतु हिन्दी कहानी को व्यापकता प्रदान करने का श्रेय प्रेमचन्द और जयशंकर प्रसाद को है।

प्रेमचन्द ने लगभग तीन सौ कहानियाँ लिखीं। **पंच-परमेश्वर** से लेकर **कफन** तक प्रेमचन्द ने जो कहानियाँ लिखी हैं उनमें उन्होंने भारतीय जन-जीवन के सुख-दुख, आशा-निराशा और उत्थान-पतन के यथार्थ और सशक्त चित्र खींचे हैं। उनकी लेखनी से जीवन का कोई पक्ष छूटा नहीं। प्रेमचन्द की कहानियों में विषयवस्तु और शैली-शिल्प दोनों की विविधता मिलती है। बोलचाल की भाषा में लिखी प्रेमचन्द की कहानियाँ ठेठ भारतीय हैं।

प्रेमचन्द के समकालीन किंतु उनसे भिन्न प्रवृत्ति वाले कहानीकार हैं – जयशंकर प्रसाद। उनकी कहानियों में इतिहास और कल्पना तथा आदर्श और यथार्थ का सामंजस्य मिलता है। जयशंकर प्रसाद कवि और नाटककार भी थे इसलिए उनकी कहानियों में काव्यात्मक-नाटकीय शैली का प्रयोग दिखाई देता है। **पुरस्कार**, **ममता**, **आकाशदीप**, **मधुआ** आदि उनकी प्रसिद्ध कहानियाँ हैं।

इसी युग के अन्य कहानीकारों में विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक' और सुदर्शन ने प्रेमचन्द की ही परंपरा का निर्वाह करते हुए सामाजिक-पारिवारिक कहानियों की रचना की। चंडीप्रसाद 'हृदयेश' और रायकृष्णदास ने प्रसाद से प्रभावित होकर कहानियाँ लिखीं। अन्य कहानीकारों में पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', विनोदशंकर व्यास, चतुरसेन शास्त्री, भगवतीप्रसाद वाजपेयी, भगवतीचरण वर्मा तथा अन्नपूर्णानंद प्रमुख हैं। इनमें से कुछ ने ऐतिहासिक विषयों को आधार बनाकर सुंदर कहानियों की रचना की तो कुछ ने सामाजिक यथार्थ को आधार बनाया। इसी प्रसंग में निराला की कहानियाँ भी उल्लेखनीय हैं, जिनमें यथार्थ जीवन के कुछ बड़े ही तीखे व्यंग्य-चित्र मिलते हैं।

प्रेमचन्द के बाद हिन्दी कहानी के विकास में योगदान देने वाले दो कहानीकार विशेष उल्लेखनीय हैं – जैनेन्द्र और यशपाल। जैनेन्द्र ने व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक समस्याओं को अपनी कहानी में महत्त्व दिया। उनकी कहानियों में पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व और दार्शनिक चिंतन को अभिव्यक्ति मिली। इलाचन्द्र जोशी और अज्ञेय ने भी मनोवैज्ञानिक कहानियाँ लिखीं।

इसी समय जैनेन्द्र और अज्ञेय से भिन्न सामाजिक यथार्थ और मार्क्सवादी चिंतन को आधार बनाकर समाज की निर्मम आलोचना करने वाले प्रगतिशील कथाकार यशपाल का हिन्दी-कहानी में आगमन होता है। यशपाल प्रेमचन्द की यथार्थवादी परंपरा को आगे बढ़ाने वाले कहानीकार माने जाते हैं। सामाजिक विसंगतियों का चित्रण और समानता की आकांक्षा उनकी कहानियों की मुख्य विशेषता है।

हिन्दी कहानी के विकास के इस दौर के कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण कहानीकार हैं – उपेन्द्रनाथ अश्क, कृश्न चन्दर, अमृतलाल नागर, द्विजेन्द्रनाथ मिश्र 'निर्गुण', विष्णु प्रभाकर, चन्द्रकिरण सोनरिक्सा, रांगेय राघव आदि। पिछले युग के अनेक कहानीकारों ने भी कुछ महत्त्वपूर्ण कहानियाँ इस दौर में लिखीं।

सन् 1947 में देश के स्वतंत्र हो जाने के बाद हिन्दी-कहानी में कथ्य और शिल्प की दृष्टि से कुछ नई प्रवृत्तियों का जन्म हुआ। इनमें **आंचलिक कहानी** और **नई कहानी** विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं। इस युग में कुछ कहानीकारों ने ग्रामांचल को विषयवस्तु के रूप में चुना। ये गाँव प्रेमचन्द के गाँव से भिन्न हैं। मिट्टी की महक के साथ अंचल विशेष की बोली-बानी का भी गहरा पुट इन कहानियों में दिखाई देता है। फणीश्वरनाथ रेणु इस आंचलिक प्रवृत्ति के सबसे समर्थ कथाकार माने जाते हैं। अन्य कहानीकारों में शिवप्रसाद सिंह, मार्कंडेय, शेखर जोशी, शैलेश मटियानी, रामदरश मिश्र आदि के नाम भी आंचलिक कहानीकारों में उल्लेखनीय हैं।

छठे दशक की कहानियों को देखते हुए कहा जा सकता है कि इस समय कहानियों का एक नया दौर शुरू हो गया। स्वाधीनता के बाद बदली हुई सामाजिक-राजनीति परिस्थितियों के कारण इस युग की कहानियाँ विषयवस्तु और शिल्प दोनों ही दृष्टियों से पूर्ववर्ती कहानियों से भिन्न हैं। इन कहानीकारों ने जीवन की विसंगतियों, विडम्बनाओं तथा भोगे हुए यथार्थ को अपनी कहानियों में कलात्मक ढंग से व्यक्त किया। एक ओर मोहन राकेश, कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव, निर्मल वर्मा, मन्नू भंडारी, उषा प्रियवंदा की कहानियों से **नई कहानी** आंदोलन शुरू हुआ तो दूसरी ओर अमरकांत, भीष्म साहनी,

शेखर जोशी, इब्राहीम शरीफ, हरिशंकर परसाई आदि सामाजिक यथार्थ के निर्मम चित्रण, मानवीय करुणा तथा व्यंग्य की दृष्टि से प्रेमचन्द की परंपरा को विकसित कर रहे थे ।

इस दौर में कृष्णा सोबती, मन्नू भंडारी, उषा प्रियवंदा, शिवानी, शशिप्रभा शास्त्री जैसी कई प्रतिभा सम्पन्न महिला कथाकारों ने मार्मिक कहानियाँ लिखीं । मृणाल पांडे, मंजुल भगत, मृदुला गर्ग, मेहरून्निसा परवेज़, ममता कालिया, चित्रा मुद्गल, निरूपमा सेवती, दीप्ति खंडेलवाल, राजी सेठ, नासिरा शर्मा, गीतांजलिश्री, मैत्रेयी पुष्पा आदि महिला कहानीकारों की अब एक लंबी और सशक्त परंपरा विकसित हो रही है ।

1962 में भारत चीन सीमा संघर्ष तथा 1964 में प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के निधन के साथ ही स्वाधीन भारत का एक अध्याय समाप्त हो गया । राजनीतिक अस्थिरता, आर्थिक तंगी और विषम परिस्थितियों ने कहानीकारों की चिंतन पद्धति को प्रभावित और आंदोलित किया। इस प्रकार सातवें और आठवें दशक की कहानी में एक और मोड़ आया । नई कहानी का भोगा हुआ यथार्थ इन नए कहानीकारों की प्रखर यथार्थवादी चेतना के लिए अपर्याप्त था ।

समाज के साथ साहित्य में भी इस काल को मोहभंग का काल कहा जाता है, इसके परिणामस्वरूप समाज और साहित्य में अनेक तरह के विद्रोह के स्वर उभरने लगे । कहानी में इसकी एक परिणति **अकहानी** के रूप में हुई और दूसरी **जनवादी** कहानी के रूप में ।

नई यथार्थ चेतना के साथ नई भाषिक संरचना को लेकर इस दौर में जो कहानीकार सामने आए उनकी रचनाओं से हिन्दी कहानी को एक नया रूप मिला । इन कहानीकारों में महेन्द्र भल्ला, रवीन्द्र कालिया, ज्ञानरंजन, काशीनाथ सिंह, गिरिराज किशोर, बाल शौरि रेड्डी, विजयमोहन सिंह, इसराइल, दूधनाथ सिंह, महीप सिंह, रमेश उपाध्याय, बदीउज्जमाँ, असगर वजाहत, संजीव, शिवमूर्ति, स्वयं प्रकाश, उदय प्रकाश आदि उल्लेखनीय हैं । इन कहानीकारों ने बदलते हुए जीवन मूल्यों को अपनी कहानियों में व्यक्त किया है ।

आज हिन्दी कहानी विषय और शिल्प की विविधता के साथ एक सशक्त और लोकप्रिय विधा है, जिसे अनेक पीढ़ियों के नए-पुराने रचनाकार अपनी लेखनी के माध्यम से समृद्ध कर रहे हैं ।

विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक'

(जन्म 1890 ई. मृत्यु 1944 ई.)

विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक' का जन्म तत्कालीन पंजाब प्रांत के अंबाला ज़िले में हुआ। कानपुर में उन्होंने मैट्रिक तक स्कूली शिक्षा प्राप्त की और साहित्य सेवा में लग गए। हिन्दी के अतिरिक्त उन्हें उर्दू और अंग्रेजी का भी अच्छा ज्ञान था। संगीत और फोटोग्राफी के प्रति उनमें विशेष रुचि थी।

कौशिक जी मुख्यरूप से कहानीकार थे, किन्तु उनके दो उपन्यास **माँ** और **भिखारिणी** भी हिन्दी जगत में प्रसिद्ध हैं। विजयानंद दूबे के छद्म नाम से उन्होंने तत्कालीन मासिक पत्रिका **चाँद** में कुछ विनोदपूर्ण पत्र भी लिखे थे, जिन्हें बाद में पुस्तक रूप में संकलित किया गया।

प्रेमचंद युग के उल्लेखनीय कथाकार कौशिक जी की कहानियों में आदर्शवाद और भावुकता की प्रधानता है। उन्होंने अपनी कहानियों में कथावस्तु, चरित्र-चित्रण और वातावरण की यथार्थ अभिव्यक्ति के साथ पात्रों के मनोविश्लेषण पर समुचित ध्यान दिया है। स्वाभाविक गद्य शैली का विकास उनकी कहानियों की एक अन्य विशेषता है।

प्रमुख रचनाएँ

चित्रशाला, **मणिमाला** (कहानी संग्रह), **माँ**, **भिखारिणी** (उपन्यास), **दूबे जी की डायरी** (पत्र संग्रह)।

अशिक्षित का हृदय प्रकृति के साथ मनुष्य के भावात्मक संबंध को व्यक्त करने वाली अत्यंत मार्मिक कहानी है। जीवन के सीधे-सच्चे आदर्शों पर चलने वाले मनोहर का अपने पिता द्वारा लगाए गए नीम के पेड़ से आत्मीय लगाव है। अभाव और विवशता के कारण उसे वह पेड़ जमींदार के यहाँ गिरवी रखना पड़ता है। जमींदार उस पेड़ को कटवाने पर उतारू है, पर मनोहरसिंह अपनी जान देकर भी उस पेड़ को बचाने का संकल्प करता है। गाँव का बालक तेजा मनोहरसिंह की भावनाओं को समझता है और अपने प्रयास से पेड़ को बचाने में सफल हो जाता है। मनोहरसिंह को तेजा जैसा सही उत्तराधिकारी मिल जाता है और वह उस पेड़ को तेजा को सौंप देता है

1

अशिक्षित का हृदय

(1)

बूढ़ा मनोहरसिंह विनीत भाव से बोला – "सरकार, अभी तो मेरे पास रुपए हैं नहीं, होते, तो दे देता। ऋण का पाप तो देने ही से कटेगा। फिर, आपके रुपए को कोई जोखिम नहीं। मेरा नीम का पेड़ गिरवी धरा हुआ है। वह पेड़ कुछ न होगा, तो पचीस-तीस रुपए का होगा। इतना पुराना पेड़ गाँव भर में दूसरा नहीं।"

ठाकुर शिवपालसिंह बोले – "डेढ़ साल का ब्याज मिलाकर कुल पचीस रुपए होते हैं। यह रुपया अदा कर दो, नहीं तो हम तुम्हारा पेड़ कटवा लेंगे।"

मनोहरसिंह कुछ घबराकर बोला –"अरे सरकार, ऐसा अंधेर न कीजिएगा, पेड़ न कटवाइएगा। रुपए मैं दे ही दूँगा, यदि न भी दे सकूँ तो पेड़ आपका हो जाएगा। पर मेरे ऊपर इतनी दया कीजिएगा कि उसे कटवाइएगा नहीं।"

ठाकुर शिवपालसिंह मुस्कराकर बोले – "मनोहर, तुम सठिया गए हो, तभी तो ऐसी ऊल-जलूल बातें करते हो। भला, जो पेड़ कटवाया न जाएगा तो हमारे रुपए कैसे निकलेंगे ?"

मनोहरसिंह बोला – "अन्नदाता, आपके रुपए तो जहाँ तक होगा मैं दे ही दूँगा ।"

ठाकुर – "अच्छा, अब ठीक-ठीक बताओ कि रुपए कब तक दे दोगे ।"

मनोहरसिंह कुछ देर सोचकर बोला –"एक सप्ताह में दे दूँगा ।"

ठाकुर – "अच्छा, स्वीकार है । एक सप्ताह में अवश्य दे देना, नहीं तो पेड़ हमारा हो जाएगा । हमारी जो इच्छा होगी, वह करेंगे । चाहे कटवाएँगे, चाहे रखेंगे ।"

मनोहर – "और चाहे जो कीजिएगा, उसे कटवाइएगा नहीं, इतनी आपसे प्रार्थना है ।"

ठाकुर –"खैर, हमारा जो जी चाहेगा करेंगे तुम्हें फिर कुछ कहने का अधिकार नहीं रहेगा ।"

(2)

मनोहरसिंह की आयु 55 वर्ष के लगभग है । अपनी जवानी उसने फौज में व्यतीत की थी । इस समय वह संसार में अकेला है । उसके परिवार में कोई नहीं । गाँव में दो-एक दूर-दूर के रिश्तेदार रहते हैं उन्हीं के यहाँ अपना भोजन बनवा लेता है । न कहीं आता है न कहीं जाता है । दिन-रात अपने टूटे-फूटे मकान में पड़ा ईश्वर भजन किया करता है ।

एक वर्ष पूर्व उसे कुछ खेती कराने की सनक सवार हुई थी । उसने ठाकुर शिवपालसिंह की कुछ भूमि लगान पर लेकर खेती कराई भी थी । पर उसके दुर्भाग्य से उस साल अनावृष्टि के कारण कुछ पैदावार न हुई । ठाकुर शिवपालसिंह का लगान न पहुँचा । मनोहरसिंह को जो कुछ पेंशन मिलती थी, वह उसके भोजन, वस्त्र भर ही को होती थी । अंत में जब ठाकुर साहब को लगान न मिला, तो उन्होंने उसका एक नीम का वृक्ष, जो उसकी झोंपड़ी के द्वार पर लगा था, गिरवी रख लिया । यह नीम का वृक्ष बहुत पुराना और उसके पिता के हाथ का लगाया हुआ था ।

मनोहरसिंह को एक सप्ताह का अवकाश दिया गया । उसने बहुत कुछ दौड़-धूप की, दो-चार आदमियों से कर्ज़ माँगा, पर किसी ने उसे रुपए न दिए । लोगों ने सोचा, वृद्ध आदमी है । न जाने कब ढुलक जाए । ऐसी दशा में रुपया किससे वसूल होगा ? मनोहर

चारों ओर से हताश होकर बैठ गया और धड़कते हुए हृदय से सप्ताह व्यतीत होने की राह देखने लगा ।

दोपहर का समय है । मनोहरसिंह एक चारपाई पर नीम के नीचे लेटा हुआ है । नीम की शीतल वायु के झोंकों से उसे बड़ा सुख मिल रहा है । वह पड़ा-पड़ा सोच रहा है कि परसों तक यदि रुपए न पहुँचेंगे तो ठाकुर साहब इस पेड़ को कटवा डालेंगे । यह पेड़ मेरे पिता के हाथ का लगाया हुआ है । मुझे और मेरे परिवार को दातून और छाया देता रहा है । इसको ठाकुर साहब कटवा डालेंगे ।

यह विचार मनोहरसिंह को ऐसा दुखदाई प्रतीत हुआ कि वह चारपाई से उठकर बैठ गया और वृक्ष की ओर मुँह करके बोला–"यदि संसार में किसीने मेरा साथ दिया है तो तूने । यदि संसार में किसी ने निःस्वार्थ भाव से मेरी सेवा की है तो तूने। अब भी मेरी आँखों के आगे वह दृश्य आ जाता है, जब मेरे पिता तुझे सींचा करते थे । तू उस समय बिलकुल बच्च्या था । मैं तेरे लिए तालाब से पानी भरकर लाया करता था । पिता कहा करते थे – बेटा मनोहर, यह मेरे हाथ की निशानी है । इससे जब-जब तुझे और तेरे बाल-बच्चों को सुख पहुँचेगा, तब-तब मेरी याद आएगी । पिता का देहांत हुए चालीस वर्ष व्यतीत हो गए । उनके कहने के अनुसार, तू सदैव उनकी कीर्ति का स्मरण कराता रहा और जब तक रहेगा, उनकी याद दिलाता रहेगा। मुझे वह दिन अच्छी तरह याद है, जब मैं अपने मित्रों सहित तेरी डालियों पर चढ़कर खेला करता था । इस समय संसार में तू ही एक मेरा पुराना मित्र है । तुझे वह दुष्ट काटना चाहता है । हाँ, काटेगा क्यों नहीं । देखूँ, कैसे काटता है"?

उसी समय उधर से एक पन्द्रह-सालह वर्ष का लड़का निकला । वृद्ध मनोहर को बड़बड़ाते देख उसने पूछा –"चाचा, किससे बातें करते हो । यहाँ तो कोई है भी नहीं ।"

बुड्ढे ने चौंककर लड़के की ओर देखा और कहा –"क्या करूँ बेटा तेजा, अपने कर्म से बातें कर रहा हूँ । ठाकुर शिवपालसिंह के मुझ पर कुछ रुपए हैं । तुझे तो बेटा मालूम

ही है कि परसाल खेती में एक दाना भी नहीं हुआ। होता तो क्या मैं उनका लगान रख लेता। अब वह कहते हैं लगान के रुपए दो, नहीं पेड़ कटवा लेंगे। इस पेड़ को कटवा लेंगे जो मेरे बाप के हाथ का लगाया हुआ है। यह बात तो देखो। समय का फेर है, जो ऐसी-ऐसी बातें सुननी पड़ती हैं। बेटा मैंने सारी उमर फ़ौज में बिताई है। बड़ी-बड़ी लड़ाइयाँ और मैदान देखें हैं। वह बेचारे हैं किस खेत की मूली ? आज शरीर में बल होता तो इनकी मजाल थी कि मेरे पेड़ के लिए ऐसा कहते ? मुँह नोच लेता। मैंने कभी नाक पर मक्खी नहीं बैठने दी। बड़े-बड़े साहब-बहादुरों से लड़ पड़ता था। यह बेचारे हैं क्या ? बड़े ठाकुर की दुम बने घूमते हैं। मैं सच कहता हूँ अभी इस गाँव के डाँड़े पर गोली चलने लगे, तो ठाकुर साहब छिपते दिखलाई पड़ेंगे। मैंने तो तोप के मुँह पर डटकर बन्दूकें चलाई हैं, पर बेटा समय सब कुछ करा लेता है। जिन्होंने कभी तोप की सूरत नहीं देखी, वह वीर और ठाकुर बने घूमते हैं। हमें आँखें दिखाते हैं कि रुपए दो, नहीं पेड़ कटवा लेंगे। देखें, कैसे पेड़ कटवाते हैं। लाख बुड्ढा हो गया हूँ, पर अब भी चार-छः के लिए बहुत हूँ। जब तलवार लेकर डट जाऊँगा तो भागते ही दिखलाई पड़ेंगे। बेटा सौ बात की एक बात तो यह है कि मुझे तो एक दिन मरना ही है। चल-चलाव लग रहा है। मैं बड़ी-बड़ी लड़ाइयों से जीता लौट आया। समझूँगा यह भी एक लड़ाई ही है। अब इसी लड़ाई में मेरा अंत है। पर इतना समझ रखना कि मेरे जीते जी इस पेड़ की एक डाल भी कोई काटने नहीं पाएगा। उनका रुपया गले बराबर है। भगवान जाने मेरे पास होता तो मैं दे देता! नहीं है, तो क्या किया जाए ? पर यह भी नहीं हो सकता कि ठाकुर साहब मेरा पेड़ कटवा लें और मैं टुकुर-टुकुर देखता रहूँ।"

तेजा बोला –"चाचा, जाने भी दो, इन बातों में क्या रखा है। पेड़ कटवाने को कहते हैं, काट लेने देना। इस पेड़ में तुम्हारा रखा ही क्या है ? पेड़ तो नित्य ही कटा करते हैं।"

मनोहरसिंह बिगड़कर बोला –"आखिर लड़के ही हो न ! अरे बेटा, यह पेड़ ऐसा-वैसा नहीं है। यह पेड़ मेरे भाई के बराबर है। मैं इसे अपना सगा भाई समझता।

हूँ। यह मेरे पिता के हाथ का लगाया हुआ है और किसी के हाथ का नहीं। जब मैं तुमसे भी छोटा था तब से इसका मेरा साथ है। मैं बरसों इस पर खेला हूँ, बरसों इसकी मीठी-मीठी निबोलियाँ खाई हैं। इसकी दातुन आज तक करता हूँ। गाँव में सैकड़ों पेड़ हैं, पर मुझसे कसम ले लो, जो मैंने कभी उनकी एक पत्ती तक छुई हो। जब मेरे घर में आप ही इतना बड़ा पेड़ खड़ा हुआ हो तब मुझे दूसरे पेड़ को हाथ लगाने की क्या पड़ी है। दूसरे, मुझे किसी और पेड़ की दातुन अच्छी नहीं लगती।"

तेजा बोला – "चाचा, बिना रुपए दिए तो यह पेड़ बच नहीं सकता।"

मनोहरसिंह – "बेटा, ईश्वर जानता है, मेरे पास रुपए होते तो मैं आज ही दे देता। पर क्या करूँ, लाचार हूँ। मेरे घर में ऐसी कोई चीज़ भी नही बची जो बेच कर दे दूँ। मुझे आज इस बात का बड़ा दुख है। गाँव भर में घूम आया, किसीने उधार न दिए। क्या करूँ, बेटा तेजा, सच जानना जो यह पेड़ कट जाएगा तो मुझे बड़ा दुख होगा। मेरा बुढ़ापा बिगड़ जाएगा। अभी तक मुझे कोई दुख न था। खाता था, ईश्वर भजन करता था। पर अब घोर दुख हो जाएगा"।

यह कह कर वृद्ध मनोहरसिंह ने आँखों में आँसू भर लिए।

तेजा वृद्ध मनोहरसिंह का कष्ट सुनकर बड़ा दुखी हुआ। तेजा गाँव के एक प्रतिष्ठित किसान का बेटा था। उसका पिता डेढ़-दो सौ बीघे भूमि पर खेती करता था। मनोहरसिंह को तेजा चाचा कहा करता था।

तेजा ने कहा, चाचा,"बापू से यह हाल कहा है ?"

मनोहर –"सबसे कह चुका बेटा। तेरा बापू तो अब बड़ा आदमी हो गया है। वह मेरे जैसे गरीबों की बात क्यों सुनने लगा। एक ज़माना था, जब वह दिन-दिन भर मेरे द्वार पर पड़ा रहता था। घर में लड़ाई होती थी, तो मेरे ही यहाँ भाग आता था और दो-दो, तीन तीन-दिन तक रहता था। वही तुम्हारा बापू अब सीधे बात नहीं करता। इसीसे कहता हूँ समय की बात है।"

तेजा ने पूछा –"कितने रुपए देने से पेड़ बच सकता है ।"

मनोहर –"पचीस रुपए देने पड़ेंगे ।"

तेजा –"पचीस रुपए तो बहुत हैं चाचा ।"

मनोहर –"पास नहीं हैं तो बहुत ही हैं । होते तो थोड़े थे ।"

तेजा –"दस-पाँच रुपए की बात होती तो मैं ही कहीं से ला देता ।"

मनोहर – "बेटा, भगवान तुम्हें चिरंजीव रखे । तूने एक बात तो कही । गाँववालों ने, तो इतना भी नहीं कहा । खैर देखा जाएगा । पर इतना तू याद रखना कि मेरे जीते जी इस पेड़ को कोई हाथ नहीं लगाने पाएगा ।"

(3)

एक सप्ताह बीत गया । आज आठवाँ दिन है । मनोहरसिंह रुपयों का प्रबंध नहीं कर सका । वह समझ गया कि अब पेड़ का बचना कठिन है । पर साथ ही वह यह भी निश्चय कर चुका था कि उसके जीते जी कोई उसको काट नहीं सकता । उसने अपनी तलवार भी निकाल ली और साफ़ करके रख ली थी । अब वह हर समय पेड़ के नीचे ही पड़ा रहता था । तलवार सिरहाने रखी रहती थी ।

आठवें दिन दोपहर के समय शिवपालसिंह ने मनोहरसिंह को बुलवाया । मनोहरसिंह तलवार बगल में दाबे अकड़ता हुआ ठाकुर साहब के सामने पहुँचा ।

शिवपालसिंह और उसके आस-पास बैठे हुए लोग बुड्ढे की इस सज-धज पर मुस्कराए । शिवपालसिंह ने कहा –"सुनते हो मनोहरसिंह, एक सप्ताह बीत गया अब पेड़ हमारा हो गया । आज हम उसकी कटाई शुरू कराते हैं ।"

मनोहर – "आपको अधिकार है । मुझे रुपया मिलता तो दे ही देता और अब भी यदि मिल जाएगा तो दे दूँगा । मेरी नियत में बेईमानी नहीं है । मैं फ़ौज में रहा हूँ, बेईमानी का नाम नहीं जानता ?"

शिवपाल –"तो अब हम उसे कटवा लें न ?"

मनोहर –"यह मैं कैसे कहूँ, आपका जो जी चाहे कीजिए।"

यह कहकर मनोहरसिंह उसी प्रकार अकड़ता हुआ ठाकुर शिवपालसिंह के सामने से चला आया और अपने पेड़ के नीचे चारपाई पर आकर बैठ गया।

दोपहर ढलने पर चार-पाँच आदमी कुल्हाड़ियाँ लेकर आते दिखाई पड़े। मनोहरसिंह झट म्यान से तलवार निकाल डटकर खड़ा हो गया और ललकार कर बोला –"सँभलकर आगे बढ़ना ! जो किसी ने भी पेड़ में कुल्हाड़ी लगाई तो उसकी और अपनी जान एक कर दूँगा।"

मज़दूर बुड्ढे की ललकार सुन और तलवार देखकर भाग खड़े हुए।

जब शिवपालसिंह को यह बात मालूम हुई तब पहले तो वे बहुत हँसे परन्तु पीछे कुछ सोचकर उनका चेहरा क्रोध से लाल हो गया। वह बोले – "इस बुड्ढे की शामत आई है। हमारा माल है। हम चाहे काटें, चाहे रखें। वह कौन होता है। चलो तो मेरे साथ, देखूँ वह क्या करता है ?"

शिवपालसिंह मज़दूरों तथा दो लट्ठबंद आदमियों को लेकर पहुँचे। उन्हें आते देख बुड्ढा फिर तलवार निकालकर खड़ा हो गया।

शिवपालसिंह उसके सामने पहुँच कर बोले –"क्यों मनोहर यह क्या बात है ?"

मनोहरसिंह बोला –"बात केवल इतनी है कि मेरे रहते इसे कोई हाथ नहीं लगा सकता। यह मैं जानता हूँ कि अब पेड़ आपका है। मगर यह होने पर भी मैं इसे कटता हुआ नहीं देख सकता।"

शिवपालसिंह –"पर हम तो इसे कटवाए बिना न मानेंगे।" मनोहरसिंह को भी क्रोध आ गया। वह बोला –"ठाकुर साहब, जो आप सच्चे ठाकुर हैं, तो इस पेड़ को कटवा लें। जो मैं असली ठाकुर हूँगा तो इसे न कटने दूँगा।"

ठाकुर शिवपालसिंह अपने आदमियों से बोले –"देखते क्या हो ? इस बुड्ढे को पकड़ लो और पेड़ काटना शुरू कर दो।"

ठीक उसी समय तेजासिंह दौड़ता हुआ आया और मनोहरसिंह को कुछ रुपए देकर बोला –"लो चाचा, ये रुपए, अब तुम्हारा पेड़ बच गया ।"

मनोहरसिंह ने रुपए गिनकर ठाकुर शिवपालसिंह से पूछा –"कहिये ठाकुर साहब, रुपए लेना हो तो ये हाजिर हैं और जो पेड़ कटवाना हो तो आगे बढ़िये ।"

ठाकुर –"रुपए अब हम नहीं ले सकते । रुपए देने की मियाद बीत गई । अब तो पेड़ कटेगा ।"

मनोहरसिंह अकड़ कर बोला –"ठीक है, अब मालूम हुआ कि आप केवल मुझे दुख पहुँचाने के लिए पेड़ कटवा रहे हैं, अच्छा कटवाइये । मुझे भी देखना है आप किस तरह पेड़ कटवाते हैं ।"

इतनी ही देर में गाँव भर में यह खबर फैल गई कि शिवपालसिंह मनोहरसिंह का पेड़ कटवा रहे हैं, पर मनोहरसिंह तलवार खींचे खड़ा है । किसी को पेड़ के पास नहीं जाने देता । यह खबर फैलते ही गाँव भर जमा हो गया ।

गाँव के दो-चार प्रतिष्ठित आदमियों ने मनोहरसिंह से पूछा –"क्या बात है मनोहरसिंह ।"

मनोहरसिंह सब हाल कहकर बोला –"मैं रुपए देता हूँ । ठाकुर नहीं लेते । कहते हैं कल तक मियाद थी । अब तो पेड़ कटेगा ।"

शिवपालसिंह बोले –"कल तक यह रुपए दे देता तो पेड़ पर हमारा कोई अधिकार न होता । अब हमारा उस पर पूरा अधिकार है । हम पेड़ अवश्य कटवाएँगे ।"

एक व्यक्ति बोला –"जब कल तक इसके पास रुपये नहीं थे तो आज कहाँ से आ गए।"

शिवपालसिंह का एक आदमी बोला –"तेजा ने अभी लाकर दिए हैं ।"

गाँववालों के साथ तेजा का पिता भी था । उसने यह सुनकर तेजा को पकड़ा और कहा –"क्यों बे, तूने ही रुपए चुराए थे । मैंने दोपहर को पूछा तो तीन-तेरह बकने लगा था ।"

इसके बाद तेजा के पिता ने कहा –"मनोहर, ये रुपए तेजा मेरी संदूक से चुरा लाया है। ये रुपए मेरे हैं।"

मनोहरसिंह रुपए फेंककर बोला –"तेरे हैं तो ले जा। मैंने तेरे लड़के से रुपए नहीं माँगे थे।"

फिर मनोहरसिंह ने तेजा से कहा –"बेटा, तूने यह बुरा काम किया। चोरी की। राम राम ! बुढ़ापे में मेरी नाक कटाने का काम किया था। ये लोग समझेंगे मैंने ही चुराने के लिए तुझसे कहा होगा।"

तेजा बोला –"चाचा, मैं गंगा उठाकर कह सकता हूँ कि तुमने मुझसे रुपए माँगे तक नहीं, चुराने के लिए कहना तो बड़ी दूर की बात है।"

शिवपालसिंह ने हँस कर कहा –"क्यों मनोहर अब रुपए कहाँ हैं, लाओ। रुपए ही लाओ। मैं रुपए लेने को तैयार हूँ। अब या तो अभी रुपए दे दो, या सामने से हट जाओ। झगड़ा करने से कोई लाभ नहीं होगा।"

मनोहरसिंह बोला –" ठाकुर साहब, इन तानों से क्या फायदा। रुपए मेरे पास नहीं हैं, लेकिन पेड़ मैं कटने नहीं दूँगा।"

शिवपालसिंह उपस्थित लोगों से बोले –"आप लोग इस बात को देखिए और न्याय कीजिए। मियाद कल तक की थी मैं आज भी रुपए लेने को तैयार हूँ। अब मेरा अपराध नहीं ! यह बुड्ढा व्यर्थ झगड़ा कर रहा है।"

तेजासिंह यह सुनते ही आगे बढ़ा और अपनी अँगुली से सोने की अँगूठी उतार कर शिवपालसिंह से बोला –" ठाकुर साहब, यह अँगूठी एक तोले की है। आप के रुपए इससे निकल आवेंगे। आप यह अँगूठी ले जाइए। इस अँगूठी पर बापू का कोई अधिकार नहीं। यह अँगूठी मुझे मेरी नानी ने दी थी।"

सब लोग लड़के की बात सुनकर दंग हो गए।

यह देख तेजासिंह का पिता आगे बढ़ा और बोला –"ठाकुर साहब, लीजिए ये पच्चीस रुपए और अब इस पेड़ को छोड़ दीजिए। आप अभी कह चुके हैं कि रुपए मिल जाएँ तो पेड़ छोड़ देंगे। अतएव अपने वचन का पालन कीजिए।"

ठाकुर साहब के चेहरे का रंग उड़ गया। उन्हें विश्वास हो गया था कि अब मनोहरसिंह को रुपए मिलना असंभव है। इसीसे उन्होंने केवल अपनी उदारता दिखाने के लिए रुपए लेना स्वीकार किया था। अब वह कुछ न कह सके। कारण उन्होंने पच्चीस-तीस आदमियों के सामने रुपए लेना स्वीकार कर लिया था। वह रुपए लेकर चुपचाप चले गए।

ठाकुर साहब के चले जाने के बाद मनोहरसिंह ने तेजासिंह को बुलाकर छाती से लगाया और कहा –"बेटा , इस पेड़ को तूने ही बचाया। अतएव मैं तुझी को यह पेड़ देता हूँ। मुझे विश्वास हो गया कि मेरे पीछे तू इस पेड़ की पूरी रक्षा कर सकेगा।"

तेजा से यह कह कर उपस्थित लोगों से कहा –"भाइयों, मैं तुम सबके सामने यह पेड़ तेजासिंह को देता हूँ। तेज़ा को छोड़कर इस पर किसी का कोइ अधिकार न रहेगा।"

फिर तलवार म्यान में रखते हुए आप ही आप कहा –"पर मेरे जीते जी कोई पेड़ में हाथ नहीं लगा सकता था, अपनी और उसकी जान एक कर देता। मैंने फ़ौज में नौकरी की है। बड़ी-बड़ी लड़ाइयाँ जीती हैं। यह बेचारे हैं क्या चीज़।"

प्रश्न-अभ्यास

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. मनोहरसिंह ने अपने नीम के पेड़ को गिरवी क्यों रखा ?
2. ठाकुर शिवपालसिंह नीम के पेड़ पर अपना अधिकार क्यों जताने लगे ?
3. मनोहरसिंह, ठाकुर शिवपालसिंह से अपने नीम के पेड़ के लिए क्या आश्वासन चाहता था ?

4. तेजा ने मनोहरसिंह की सहायता के लिए रुपये चुराए, इसे आप कहाँ तक उचित समझते हैं ?
5. तेजा ने मनोहरसिंह की सहायता किस प्रकार की ?
6. ठाकुर शिवपालसिंह का कर्ज़ अदा हो जाने के पश्चात, मनोहरसिंह ने अपने नीम के पेड़ के विषय में क्या निर्णय लिया ?

निबंधात्मक प्रश्न

1. मनोहरसिंह की व्यथा सुनकर तेजासिंह को कैसा लगा ? स्पष्ट कीजिए।
2. मनोहरसिंह के किस कथन से तेजा प्रभावित हुआ ?
3. ठाकुर शिवपालसिंह अपने ही शब्दों में किस प्रकार फँस गए ?

अन्नपूर्णानंद

(जन्म 1895 ई. मृत्यु 1962 ई.)

अन्नपूर्णानंद का जन्म काशी में हुआ। बी.एस.सी. तक शिक्षा प्राप्त कर अन्नपूर्णानंद जी ने कुछ दिनों तक पं. मोतीलाल नेहरू के पत्र इंडिपेंडेंट में कार्य किया। बाद में काशी के प्रसिद्ध हिन्दी प्रेमी बाबू शिवप्रसाद गुप्त के निजी सचिव भी रहे। अन्नपूर्णानंद जी संपूर्णानंद जी के छोटे भाई थे।

विज्ञान के विद्यार्थी होने के बावजूद उनकी रुचि हिन्दी में हास्य-व्यंग्य की रचनाएँ लिखने में रही। उन्होंने हास्य-व्यंग्य के अनेक लेख एवं कहानियाँ लिखीं। अपनी कहानियों के माध्यम से अन्नपूर्णानंद जी ने काशी के परिवेश को बड़े ही सुंदर एवं सजीव ढंग से प्रस्तुत किया है। उन्होंने अपनी हास्य-व्यंग्य की रचनाओं में समाज की कुरीतियों, कुप्रथाओं और ढकोसलों की आलोचना की है। शालीनता और सजीवता उनके व्यंग्यों की प्रमुख विशेषता है।

मुख्य रचनाएँ

मनमयूर, **मेरी हजामत**, **मंगलमोद**, **मगन रहु चोला**, **मिसिरजी**, **महाकवि चच्चा** आदि। इनमें **महाकवि चच्चा** सबसे अधिक प्रसिद्ध है।

दावत की अदावत कहानी में एक रोचक प्रसंग का वर्णन है । लेखक ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि दोस्तों के बीच समय-समय पर होने वाली आपसी झड़पों और परस्पर मूर्ख बनानेवाली प्रतियोगिताओं से मित्रता और घनिष्ठ होती है ।

सरल-सहज भाषा में लिखी गई इस कहानी को पढ़कर पाठक हँसी से लोट-पोट हो जाता है ।

2

दावत की अदावत

यह मैंने आज ही जाना कि जिस सड़क पर एक फुट मोटी धूल की परत चढ़ी हो वह फिर भी पक्की सड़क कहला सकती है। पर मेरे दोस्त झूठ तो बोलेंगे नहीं। उन्होंने कहा था कि पक्की सड़क है, साइकिल उठाना, आराम से चले आना।

धूल भी ऐसी-वैसी नहीं। मैदे की तरह बारीक होने के कारण उड़ने में हवा से बाजी मारती थी। मेरी नाक को तो उसने अपने बाप का घर समझ लिया था। जितनी धूल इस समय मेरे बालों में और कपड़ों पर जमा हो गई थी उतनी से तो मेरे ही जैसा एक और मिट्टी का पुतला बन जाता।

पाँच मील का रास्ता मेरे लिए सहारा का रेगिस्तान हो गया। मेरी साइकिल पग-पग पर धूल में फँस कर खुद भी धूल में मिल जाना चाहती थी। मैंने इतनी धूल फाँक ली थी कि अपने फेफड़ों को इस समय बाहर निकाल कर रख देता तो देखनेवाले समझते कि सीमेंट के बोरे हैं।

खैर, किसी तरह सड़क खत्म हुई और मैं एक लंबी पगडंडी तय करके उस बाग के फाटक पर पहुँचा जिसमें आज मेरी मित्र-मंडली सुबह से ही आकर टिकी थी।

फ़ाटक पर खड़े होकर मैंने अपने को झाड़ा-झरकारा। ज़रूरत थी फावड़े की पर मैंने हाथ ही से अपने शरीर की धूल हटाई।

मैं बिलकुल लस्त हो गया था। धूल की वैतरणी पार करने के बाद यह बाग स्वर्ग-सा प्रतीत हो रहा था। हृदय धीरे-धीरे आनंद की पेंग मारने लगा। बारह बज गये थे, मित्रों ने रसोई तैयार कर ली होगी, मेरा इंतज़ार कर रहे होंगे। पता नहीं बाटियों को लोगों ने घी में तर कर रखा है या नहीं। मैंने कह तो दिया था।

बाग में मैं दाखिल हुआ। बीच में एक बारहदरी थी। चांडाल चौकड़ी वहीं ठहरी होगी। मैं उसी तरफ बढ़ा। मन में सोचता जा रहा था कि एक बार पहुँचते ही सबको खूब लताड़ूँगा कि दावत देने की आखिर यह कौन-सी जगह थी। शहर से इतनी दूर और ऐसी खराब सड़क।

लेकिन बारहदरी में कोई दिखाई न पड़ा। किसी पेड़ के नीचे सब होंगे। 'बहरी तरफ़' का मज़ा पेड़ों ही के नीचे आता है।

मैंने सारा बाग छान डाला, कहीं किसी की गंध भी न थी। आखिर मामला क्या है ? दूर पर एक माली कुछ काम करता दिखाई पड़ा। उसके पास जाकर मैंने पूछा – "क्यों भाई ! आज सुबह शहर से कुछ लोग यहाँ सैर के लिए आए थे ?"

"नाहीं तो !" उसने कहा।

"अरे मुरारी नाम का कोई आदमी नहीं आया था ? इकहरा बदन, साँवला रंग, गाल पर एक बड़ा-सा मस्सा।"

"नाहीं, कोई नहीं आवा रहा।"

"मुरली नाम का कोई आदमी ? लम्बा कद, चपटी नाक . . . ।"

"नाहीं।"

"और माधो नाम का ?"

उसने झुँझला कर रहा – "नाहीं साहब ! माधो नाम का भी कोई नाहीं आवा रहा, और मुन्नू, महँगी, मँगरू, मेवा, मोहन, मुनेस्सर, नाम का भी कोई नाहीं आवा रहा।"

मैं अपना सिर पकड़ कर वहीं बैठ गया । मैं फिर मूर्ख बना, इसी एक साल में तीसरी बार ।

पहली बार, गंगा में नाव पर इन बदमाशों ने मुझे दावत के लिए बुलाया और मूर्ख बनाकर सोता हुआ छोड़ कर भाग गए । दूसरी बार, खुद सब खा-पीकर मुरारी के मकान पर आए थे, मुझे दावत के नाम पर वहीं रोक रखा, पास के किसी कमरे में जलते तवे पर पानी के छींटे दे-देकर मुझे भुलावा दिया कि खाना तैयार हो रहा है, अंत में रात के बारह बजे मैं खाली पेट रोता-कलपता घर लौटा ।

और आज यह तीसरी बार । गरमी का दिन, दोपहर का समय, शहर से कोसों दूर और ऐसी खराब सड़क ।

मैंने उस माली से कहा – "जरा पाँच मिनट के लिए अपने कानों में उँगली तो डाल लो ।"

"काहे ?" – उसने चकित होकर पूछा ।

"अपने दोस्तों को मैं गाली दूँगा ।"

"साहब, फ़जूल हमारा बखत मत खराब करो ।"

रोता-झींकता मैं उसी 'पक्की' सड़क से लौटा । मैं था साइकिल पर सवार पर यदि साइकिल ही मेरे ऊपर सवार होती तब भी उसे आगे बढ़ाने में मुझे इससे अधिक जोर न लगाना पड़ता । धूप की तेज़ी के साथ-साथ हवा भी तेज़ हो गई थी । धूल की बहार इस समय मैं आखों से कम, आँखों में ही अधिक देख रहा था ।

साढ़े तीन बज़े के करीब मैं शहर पहुँचा । मैं थकावट और भूख से चूर-चूर हो रहा था पर इस समय मुझे सिर्फ एक धुन थी – मुरारी को पकड़ कर पीटने की । वही ऐसी शरारतों का आविष्कारक और सूत्रधार होता है ।

मैं सीधे मुरारी के मकान पर पहुँचा । उसके छोटे भाई से भेंट हुई । मैंने पूछा – "मुरारी है ?"

"नहीं ।"

"कहाँ गया ?"

"मैं नहीं जानता ।"

"आप बहुत थके-माँदे जान पड़ते है । जल पीजिएगा ?"

"मैं इस समय मुरारी के खून का प्यासा हूँ । आए तो उससे कह देना ।"

पास ही में मुरली का मकान था । वहाँ गया, वह भी न मिला । माधो से भी भेंट न हुई । मैं समझ गया कि सब के सब जानबूझकर कहीं छिपे हुए हैं । यह तो वे सब जानते ही होंगे कि इस समय मैं ज़्यादा खतरनाक हो रहा था ।

मैं अपने मकान की ओर चला । रास्ते में पंडित नेकीराम से भेंट हो गई । वे इसी जिले में बी.एन.डबल्यू. रेलवे के राहुलगंज नामक स्टेशन के स्टेशन-मास्टर हैं । मेरा कुछ एहसान उनके ऊपर था, इससे मेरा लिहाज़ करते थे ।

नमस्कार-प्रणाम के बाद मैंने पूछा – "कहिए कहाँ जा रहे हैं ?"

"दो महीने की छुट्टी मैंने माँगी थी जो मंजूर हो गई है । एक हफ़्ते में घर जानेवाला हूँ । आज कुछ सामान खरीदने शहर आया था । आप तो कभी आते ही नहीं, कई बार प्रार्थना की कि एक रात वहीं बसेरा कीजिए ।"

"अच्छा आऊँगा । हो सका तो आपके जाने के पहले ही आऊँगा ।"

उस समय मैं भूखा-प्यासा अधिक बातें नहीं कर सकता था । मैं किसी तरह गिरता-पड़ता घर पहुँचा ।

तीन दिन तक मुरारी, मुरली, माधो या मोहन किसी की सूरत न देख पड़ी । चौथे दिन सब के सब साथ ही मेरे मकान पर आए । पूर्व इसके कि मेरा पारा चढ़े उन सबने हँसना शुरू किया और ईश्वर झूठ न कहलाए, पन्द्रह मिनट तक लगातार सब हँसते रहे । मैं खड़ा दाँत पीसता रहा ।

मुरारी ने हँसते हुए कहा – "देखो, जब तक तुम हम लोगों को एक दावत न दे दोगे तब तक हम लोग तुम्हें इसी तरह मूर्ख बनाकर छकाया करेंगे ।"

किसी तरह अपना गुस्सा पीते हुए मैंने कहा – "अपने घर पर तो मैं तुम लोगों को दावत दे नहीं सकता . . . ।"

"अच्छा ! बाहर कहीं ।"

"राहुलगंज चलोगे ? छोटी लाइन से तीन स्टेशन है यहाँ से । बड़ा रमणीक स्थान है । वहाँ के स्टेशन-मास्टर मेरे मित्र हैं । दावत का सारा प्रबंध कर रखेंगे ।"

मेरी यह राय सबको पसंद आई । कल ही वहाँ चलने की पक्की ठहरी । दूसरे दिन शाम को पाँच बजे की गाड़ी से हम रवाना हुए और छः बजते-बजते राहुलगंज पहुँच गए ।

पंडित नेकीराम मेरे साथ इतने आदमियों को देखकर घबराए । उन्हें अलग ले जाकर मैंने उनसे कुछ बातें की । वे हँसकर चुप हो रहे । मैंने पूछा – "आप कल सुबह जा रहे हैं ?"

"कल सुबह नहीं, बल्कि आज ही रात में तीन बजे की गाड़ी से । मेरे रिलीफ आ गए हैं । कल से मेरी छुट्टी शुरू होगी ।"

इधर मुरारी और मोहन में यह बहस हो रही थी कि आसन कहाँ पर जमाया जाए । मुरारी प्लेटफार्म पर ही दरी बिछाकर बैठना चाहता था । मोहन की राय थी कि सामने कुएँ की जगत पर बैठक जमे । पर मैंने जो राय दी वह अपनी नवीनता के कारण सबको फ़ौरन पसंद आ गई ।

स्टेशन की बगल में और रेल की पटरियों से कुछ फासले पर पानी की एक टंकी थी । ज़मीन से करीब चालीस फुट की ऊँचाई पर यह लोहे के खम्भों के ऊपर बैठाई हुई थी । चढ़ने के लिए बगल में लोहे की पतली-सी सीढ़ी लगी थी । टंकी ऊपर से ढकी हुई थी ।

मैंने कहा कि क्यों न इसी टंकी पर चढ़कर बैठा जाए । चाँदनी रात में बड़ा मजा रहेगा । चारों ओर से हवादार जगह, फिर नीचे से पानी की तरी । पास में पेड़ों का झुरमुट होने के कारण कोई देखेगा भी नहीं ।

बस यही ठीक रहा। मेरी सूझ की सबने तारीफ़ की। टंकी पर एक दरी बिछा दी गई और मित्र-मंडली उस पर जा धमकी। कहकहों का बाज़ार गर्म हुआ, गुलछर्रे उड़ने लगे। दो-ढाई घंटा तो देखते-देखते बीत गए। नौ बजे लोगों की राय हुई कि अब खाना आना चाहिए। ऊपर ही खाया जाएगा। मैं प्रबंध करने के लिए नीचे भेजा गया।

पंडित नेकीराम अपने कमरे में स्टेशन पर बैठे हुए थे। मैंने जाकर कहा – "पंडितजी ! अब कोई आदमी दीजिए जो सीढ़ी गिराने में मेरी मदद करे। लेकिन पहले एक घड़ा पानी पीने का ऊपर रखवा दीजिए, गरमी के दिन हैं।"

पंडितजी ने अपना नौकर मेरे साथ किया। नौकर जिस समय घड़े का पानी लेकर टंकी पर चढ़ा उस समय दोस्तों ने समझा कि अब भोजन भी आता होगा। लेकिन नौकर ने उतर कर मेरी मदद से लोहे की सीढ़ी खिसका कर नीचे गिरा दी। मैं नीचे बैठकर तमाशा देखने लगा। करीब आधा घंटा लोगों ने और इंतज़ार किया। फिर यह राय हुई कि कोई नीचे उतर कर देखे कि भोजन पहुँचने में क्यों देर हो रही है। मुरारी नीचे आने के लिए खड़ा हुआ।

पर यह क्या ? सीढ़ी कहाँ गायब हो गई ? मुरारी ने झुककर देखा तो सीढ़ी ज़मीन पर गिरी हुई दिखाई पड़ी।

उस छोटी-सी दुनिया में जो इस समय पानी की टंकी पर स्थित थी एक क्रांति-सी पैदा हो गई। मुझे अभी तक इसका खेद है कि काफ़ी प्रकाश न होने के कारण मैं अपने मित्रों का चेहरा अच्छी तरह नहीं देख पाया था। शोर काफ़ी सुनाई पड़ रहा था।

मैंने नीचे से पूछा – "क्या है मुरारी ! क्यों शोर कर रहे हो ?"

"अजी यहाँ की सीढ़ी कैसे गिर गई ?"

"तुम जानो, मैं क्या जानूँ।"

"बड़ी मुश्किल हुई। हम लोग नीचे कैसे उतरेंगे ?"

"नीचे उतरने की ज़रूरत क्या है ? अब सवेरे नीचे उतरना। बड़े भाग्य से ऐसा उच्च स्थान प्राप्त होता है।"

"फ़जूल मत बको।"

"देखो चाँदनी खिली हुई है। शीतल-मंद-सुगंध बयार बह रही है। ऊपर निर्मल निरभ्र आकाश का वितान है, नीचे हरी-भरी पृथ्वी का प्रसार है।"

"अच्छा चुप रहो।"

"आदर्श ऋतु है, सुंदर स्थान है, मनोरम दृश्य है। इससे अधिक क्या चाहिए ? निश्चिंत होकर प्रकृति का निरीक्षण करो।"

"तुम न मानोगे ?"

"अच्छा कविता करो, या कहानी कहो, रात कट जाएगी। जरा यह तो सोचो कि इस समय तुम लोग स्वर्ग के कितने निकट हो।"

मैंने पंडित नेकीराम के नौकर से कह दिया था। वह एक हाथ में लालटेन और दूसरे में मेरी थाली लिए पहुँचा। मैं वहीं बैठकर खाने लगा। मोहन ने ऊपर से पूछा "अजी हम लोग क्या खाएँगे ?"

मैंने कहा – "इसी अफसोस में मैं आज कुछ ज़्यादा खा रहा हूँ।"

"मर जाव खाते-खाते" – मोहन ने कहा।

"यह कचौरियाँ बड़ी लाजवाब बनी हैं। कहो तो एक टुकड़ा तुम लोगों के देखने के लिए ऊपर फेंकूँ ?"

इसका मुझे कोई उत्तर तो न मिला पर कुछ लोगों के कराहने की आवाज़ मुझे साफ़ सुनाई दी। मैंने फिर कहा – "अजी इस रबड़ी की खुशबू से तो दिल हरा हो गया। तुम लोगों तक इसकी खुशबू पहुँच रही है या नहीं ?"

इस बार भी मुझे कोई उत्तर न मिला। मैंने ऊपर अपनी निगाह उठाई। आपने अँधेरे में किसी बिल्ली की आँखें चमकती हुई देखी हैं ? ठीक उसी तरह की चार जोड़ी आँखें टंकी के ऊपर से मेरी ओर आग फेंक रही थीं। खाना खत्म करके मैं वहाँ से चलने लगा। चलते हुए मैंने कहा – "ऊपर एक घड़ा पीने का पानी मैंने रखवा दिया है। खाली पेट ठंडा जल पीना आयुर्वेद में त्रिदोषनाशक माना गया है।"

थोड़ी दूर जाकर मैं फिर लौटा। एक बात मैं भूल गया था। मैंने कहा -- "हाँ, एक बात और। पंडित नेकीराम ने कहा है कि रात में अगर किसी ने शोर किया तो वे पुलिस को खबर दे देंगे कि कुछ बाहरी लोग बिना इज़ाज़त स्टेशन की टंकी पर चढ़ गए हैं और उधम मचा रहे हैं।"

"तुम्हारा संहार हो" – मुरारी और मोहन ने कहा।

"तुम्हारा सत्यानाश हो" – मुरली और माधो ने कहा।

ग्यारह बज गए थे। स्टेशन पर आकर मैं लेट रहा। राहुलगंज ब्रांच लाइन का एक स्टेशन है। रात में गाड़ियाँ नहीं आती-जाती। स्टेशन पर इसलिए शांति थी।

सुबह साढ़े तीन बजे की गाड़ी से पंडित नेकीराम रवाना हो गए। मैं भी उसी गाड़ी से रवाना हुआ। पंडितजी ने नए स्टेशन मास्टर से जो उनके मित्र थे, चलते समय कह दिया कि उनके कुछ मेहमान पानी की टंकी पर सो रहे हैं, उन्हें सुबह छह बजे की गाड़ी के समय से सीढ़ी लगाकर उतार दीजिएगा।

घर आकर मैं कई दिन तक बाहर नहीं निकला। मुरारी वगैरह आते थे और हाथ मलकर लौट जाते थे।

प्रश्न-अभ्यास

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. मित्रों ने लेखक को दावत के लिए कहाँ बुलाया था ?
2. दावत तक पहुँचने का रास्ता कैसा था ?
3. बाग में मित्रों को न पाकर लेखक की क्या दशा हुई ?
4. लेखक ने मित्रों को दावत पर कहाँ बुलाया ?

5. लेखक ने मित्रों को टंकी पर ठहराने का क्या बहाना किया ?
6. नीचे उतरकर लेखक ने क्या किया ?
7. टंकी के नीचे भोजन करते हुए लेखक ने भोजन की कैसी तारीफ़ की ?
8. ऊपर बैठे हुए असहाय मित्रों की दशा का वर्णन कीजिए ।

निबंधात्मक प्रश्न

1. लेखक के मित्र उसे दावत पर बुलाकर हर बार कैसे मूर्ख बनाते थे ?
2. लेखक ने मित्रों को मूर्ख बनाने के लिए क्या योजना बनाई थी ?
3. दावत की अदावत से लेखक का क्या आशय है ?

द्विजेन्द्रनाथ मिश्र 'निर्गुण'

(जन्म 1915 ई. मृत्यु 1993 ई.)

द्विजेन्द्रनाथ मिश्र 'निर्गुण' का जन्म बदायूँ, उत्तरप्रदेश में हुआ। उन्होंने साहित्यरत्न और एम.ए. की उपाधियाँ प्राप्त की। प्रारंभ में निर्गुणजी **माया** और **मनोहर कहानियाँ** के संपादक रहे। बाद में बनारस के श्री सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय में कार्यरत रहे।

निर्गुण जी ने यद्यपि उपन्यास भी लिखे हैं, किंतु उनकी सृजनशक्ति कहानियों में ही पूरी तरह मुखरित हुई है। मानवीय मूल्यों के प्रति समर्पित कथाकार निर्गुण ने अपनी अनुपम शैली में बहुत ही सुन्दर कहानियाँ लिखी हैं। पारंपरिक शैली और बोलचाल की भाषा में लिखी उनकी कहानियाँ बहुत मार्मिक हैं।

प्रमुख रचनाएँ

बहूजी, **दो किनारे**, **कच्चा धागा**, **तीला**, **खोज**, **प्यार के भूखे**, **टूटे सपने**, **जिन्दगी**, **लाजवंती**, **डाक्टर** आदि।

रस-बूँद अमीरी और गरीबी के भेद के कारण टूटते पारिवारिक संबंधों की कहानी है। अमीरी प्रायः मनुष्य को अमानवीय एवं स्वार्थी बना देती है। इस बात को लेखक ने रामचरन के प्रति उसके चाचा और भाई लल्ला के हृदयहीन और निष्ठुर व्यवहार के माध्यम से व्यक्त किया है। एक ओर लल्ला खेल में रामचरन के साथ धोखाधड़ी करता है तो

दूसरी ओर लल्ला का पिता रामचरन की बालकोचित इच्छा के साथ क्रूर मजाक करते हुए उसका हाथ जला देता है। जो व्यक्ति रामचरन के साथ क्रूरतापूर्ण व्यवहार करने में नहीं हिचका वही अपने बेटे लल्ला के तलवों पर मेंहँदी लगा रही अपनी पत्नी से कहता है "सँभालकर लगाना कहीं उसकी नींद न टूट जाए।"

अमीरी की हृदयहीनता के सामने गरीबी की मज़बूरी को व्यक्त करना ही **रस-बूँद** का उद्देश्य है।

3

रस-बूँद

पछाँही गाँव था। आबादी काफ़ी थी और शहर से सीधा संबंध था। मोटर, लारी, इक्का, ताँगा बीच से होकर गुज़रते थे, पक्की सड़क लगी थी। सब चीज़ें मिलती थीं। आटा-दाल, मसाले, मेवे, कपड़े, बिसातवाले सभी की दुकानें थीं, मिठाई भी बनती थी।

मिठाई की दुकान गंगासहाय की थी। पहले बाप बैठते थे। बड़ा पैसा पैदा किया उन्होंने। पक्का मकान बनवा लिया। बाप मर गए, तब से गंगासहाय दुकान चला रहा है।

वह बाप का अकेला है, उसका बेटा भी अकेला है। बेटा मदरसे में पढ़ता है। उसे सब 'लल्ला' कहते हैं, बहुत लाड़-प्यार है।

लेकिन कुनबा बहुत बड़ा है। कुनबा – यानी चाचा-ताऊ, चचेरे-तयेरे, चाची-ताई, बुआ-जीजी, भतीजे-भतीजी।

उनमें कुछ अमीर हैं, कुछ गरीब हैं। यह अमीरी-गरीबी पास-पास रहने से और भी स्पष्ट हो उठती है। दिन-रात, चौबीसों घंटे सब कोई महसूस करते हैं, अमीर अपनी अमीरी और गरीब अपनी गरीबी। यह अमीरी-गरीबी शाश्वत नहीं है। पहले तो सब एक ही घर के थे, एक-सा

ही खाते-पीते, पहनते थे। एक दिन जो चतुर थे उन्होंने अपना कर्त्तव्य पहचान लिया। वे अमीर हो गए। मूर्ख लोग एकता और समानता को पकड़े रहे। वे अब गरीब हैं। गंगासहाय के दादा मूर्ख न थे, गंगासहाय अमीर है – गंगासहाय का लल्ला भी अमीर है।

मूर्खों में एक थे लेखराज। उनका बेटा फल भुगत रहा है, उनका नाती अभी से गरीब है। उमर उसकी मुश्किल से आठ नौ साल की होगी, लेकिन इससे क्या ? वह गरीब बन गया है।

वह भी अपने बाप का अकेला है, उसकी माँ भी उसको लाड़-प्यार करती है। रामचरन नाम है – 'रामचन्ना' कहकर सब पुकारते है। केवल माँ लल्ला कहती है। उसका मकान पुराने खंडहर के बीच बूढ़े भिखारी की तरह खड़ा है। उसके बाप की दुकान नहीं है। बाप नौकर है, शहर में किसी की दुकान पर।

जाड़ा उतर रहा था। उस दिन मदरसे की छुट्टी थी। लड़के मज़े में इधर-उधर घूम रहे थे। लल्ला के अनेक संगी-साथी हैं। रामचन्ना भी दर्जे में साथ पढ़ता है, भाई लगता है। भाई है तो क्या हुआ – उसका पक्का मकान है, उसके बाप की दुकान है, उसके पास अच्छे कपड़े हैं ? लल्ला उससे दोस्ती नहीं रखता। उसकी अम्मा ने मना कर दिया है, अलग रहा करो इससे। उसे दोस्तों की क्या कमी है। उसकी मीठे की दुकान है। बाप से माँगकर चाहे किसी दिन सबको मीठा बाँट देता है। सब साथी कृतज्ञ हैं।

पास की गली में 'इक्की-दुक्की' खेली जा रही थी। लल्ला सरदार था। सिरके से बासी रोटी खाकर रामचन्ना भी घूमता हुआ आ पहुँचा। खेल दुबारा शुरू हो रहा था। लल्ला से घिघियाकर कहा, "भैया, हमें भी खिला लो।"

वह लल्ला से 'भैया' ही कहता है, अम्मा ने कह दिया है कि नाम कभी मत लेना।

लल्ला ने कहा, "भाग जा कनेटा ! तुझे नहीं खिलाऊँगा।"

खेल शुरू हो गया। रामचन्ना खड़ा देखता रहा।

पर तीन-चार मिनिट पीछे विघ्न पड़ गया। बेईमानी की थी लल्ला ने, विपक्षी लड़का बिगड़ गया। लल्ला ने कहा, "तो मत खेलो।" वह खेल रुक गया।

एक ने सोचकर कहा, "अच्छा, "घोड़ी-घोड़ी" खेला जाए।"

"लेकिन पहले घोड़ी कौन बनेगा ?"

"अरे, रामचन्ना जो है !"

लल्ला ने कहा, "तुम अगर घोड़ी बनो पहले तो तुम्हें खिलाएँगे।"

रामचन्ना ने कहा – "फिर मैं भी चढ़ूँगा।"

लल्ला ने कहा, "हाँ, चढ़ना।"

रामचन्ना घोड़ी बन गया और लड़के बारी-बारी से उसकी पीठ पर बैठकर गेंद उछालने लगे। किसी से भी गलती न हुई। रामचन्ना उसी तरह झुका रहा। सबको पीठ पर चढ़ाता रहा। अंत में लल्ला की बारी आई। वह रामचन्ना की पीठ पर कूदकर बैठा, ठीक जिस तरह कि घोड़ी पर बैठते हैं। रामचन्ना की कमर लचक गई। लल्ला ने उसकी खोपड़ी पर एक धौल जमाई और कहा, "बच्चू, ठीक से रहो।" और गेंद उछाली। गेंद छूट गई। लड़के ताली पीटकर चिल्ला उठे, "चोर-चोर, लल्ला चोर !"

लल्ला पीठ पर से उतर पड़ा। रामचन्ना खुश होकर अपना लाल मुँह लिए सीधे खड़ा हो गया। लल्ला पर सबसे पहले वही सवारी करेगा। कूद-कर बोला, "भैया, अब चलो, मैं चढ़ूँगा।"

तो लल्ला को खयाल आया। फ़ौरन डाँटकर कहा, "भाग जा कनेटा, मैं चढ़ूँगा ! मुँह तो देखो।"

रामचन्ना बड़ा खिन्न हुआ, चेहरा उतर गया। तब से सब को सवारी दे रहा था, उसकी बारी आई तो डपट दिया।

लड़के खूब प्रसन्न हुए, बोले, "खूब सवारी मिली, खूब चढ़े हम तो।"

एक ने कहा, "अच्छा, एक बार और। अच्छा रामचन्ना इस बार बेईमानी नहीं होगी, तू बन तो जा घोड़ी।"

वह रामचन्ना का हाथ पकड़कर उसे झुकाने लगा। रामचन्ना, रुआँसा होकर एक किनारे को हट गया।

लल्ला को बड़ा मज़ा आया। साथियों से कहा, "चलो, सबको पेड़े खिलाएँगे दुकान पर।"

सब लड़के चल दिए। पीछे-पीछे उदास होकर रामचन्ना भी चला।

लल्ला ने दुकान पर चढ़कर बाप से पेड़े माँगे। फिर क्रमशः सब लड़कों को देने लगा। वह खुद मिठाई नहीं खाता। जी भर गया है खाते-खाते।

चुपके से रामचन्ना पीछे जा खड़ा हुआ था। पर उसे पेड़े में हिस्सा नहीं मिला। लल्ला की इच्छा नहीं हुई। रामचन्ना सतृष्ण आँखों से देखता ही रहा। लड़के पेड़ा खाकर चले गए।...

जलेबी बनानी थी। गंगासहाय चीनी की चाशनी पका रहा था। भट्ठी सुलग रही थी और बड़ी-सी लोहे की कड़ाही में दस-बारह सेर चीनी 'बुद्-बुद्' करके फदक रही थी। जब उफान आता तो गंगासहाय दूध का छींटा मार देता और कड़ाही में करछुल घुमाकर लौट-पौट देता।

रामचन्ना को जाने कब से मीठा खाने को नहीं मिला है।

उसी तरह ललचाता खड़ा था और प्यासी आँखों से मिठाइयों की ओर देख रहा था।

गंगासहाय किसी काम से भीतर उठकर गया। कड़ाही के आस-पास रस की बूँदे टपकी थीं, टपककर ज़मीन पर जम गईं थीं। रामचन्ना की नज़र जा पड़ी। बढ़ गया और अँगुली से उठाकर उन बूँदों को चाटने लगा। सब चाट लीं।

गंगासहाय लौट आया। उफान आ रहा था। जल्दी से करछुल से टाला, दो-चार बूँदे फिर गिर गईं आस-पास। रामचन्ना खड़ा था। डरते-डरते गंगासहाय चाचा के सामने ही उसने अँगुली से उठाकर रस की बूँदे चाट लीं। चाचा नहीं बोले। बड़ा खुश हुआ मन में। खड़ा-खड़ा देखता था। कोई बूँद गिरती थी तो फ़ौरन अँगुली से उठाकर चाट लेता था।

अंत में चाशनी तैयार हो गई। गंगासहाय ने दोनों कुंडे कपड़े से पकड़े और कड़ाही उतारकर नीचे धर ली और पीढ़े पर बैठकर उसे घोटने लगा।

रामचन्ना भी इधर आ खड़ा हुआ। शायद कोई बूँद गिरे।

गंगासहाय फिर दुकान के भीतर काम से उठ गया। रामचन्ना ललचा रहा था। चाशनी स्थिर थी, अब बुदबुदे नहीं थे। इस किनारे पर कुछ चीनी लगी थी। वह पककर खस्ता हो गई थी। रामचन्ना ने चुपके से छुटाकर खा ली। फिर उधर से भी छुटाई।

गंगासहाय ने आते-आते देख लिया। कुछ नहीं कहा। रामचन्ना जल्दी से खड़ा हो गया, खड़ा होकर देखने लगा। तीन-चार बूँदें गिरी।

चट से चाट लीं। फिर खड़ा-खड़ा देखने लगा ...

एक ग्राहक आ गया। गंगासहाय उसे सौदा देता रहा। रामचन्ना खड़ा रहा। वह चला गया तो फिर गंगासहाय चाशनी के पास आया। अँगुली से छू-कर देखा, तार बँधता है कि नहीं। तब तक कहीं एक बूँद टपक गई। रामचन्ना झुका और चाट ली।

कोई पास-पड़ोस में न था। अब गंगासहाय ने रामचन्ना की तरफ़ देखा और इशारा किया। पर रामचन्ना को विश्वास न हुआ। क्या कड़ाही में से लेने को कह रहे हैं।

गंगासहाय ने फिर आँख से इशारा किया और हाथ उठाकर बताया कि इस तरह कड़ाही की चाशनी में से रस का चुल्लू भर लो!

रामचन्ना डरता-डरता कड़ाही के पास बैठ गया।

गंगासहाय ने उत्साहित किया, "ले!"

इस तरह चुल्लू भरकर!

तब प्रसन्न होकर रामचन्ना ने हाथ बढ़ाया और आग की तरह जलती चाशनी में, जो देखने में शीतल लगती थी, रामचन्ना ने उत्साहित होकर अपना छोटा-सा हाथ जल्दी से डाल दिया।

चुल्लु-भर रस के लिए!

पर रस नहीं ले सका। उसी क्षण जोर से चीत्कार करके चाशनी में जली अँगुलियाँ छिटकता "अरी अम्मा री–हाय अम्मा !" कहता घर की ओर भाग चला।

गंगासहाय ने धीरे से कहा, "साले !"

फिर वह जलेबी बनाने बैठा।...

माँ अभी तक चक्की पीस रही थी। रामचन्ना जलन से बेकल था। घुसते ही फ़ौरन पानी के घड़े में हाथ घुसेड़ दिया और ज़ोर-ज़ोर से रोने-चिल्लाने लगा। माँ ने सुना तो चक्की पर से दौड़ी आई "क्या हुआ ?"

रामचन्ना ने रोते-रोते कहा, "हाथ जल गया है मेरा।"

"कैसे जल गया ?" – माँ ने घबराकर कहा, "देखूँ तो, कहाँ जला लाया अभागे !" पर रामचन्ना ने नहीं बताया कि किस तरह वह जला।

माँ ने धीरे से बाँह पकड़कर जब हाथ घड़े से बाहर खींचा तो देखकर चिल्ला उठी, "मैया री, हाय-हाय रे।" जाने कैसी कातर दृष्टि हो गई।

रामचन्ना के पूरे हाथ पर फफोले उभर आए थे, पूरा हाथ भरा था।

करुण स्वर से पुकारकर कहा, "चाची, ओ चाची !"

सामने के घर में एक औरत आ बसी थी। पुकार सुनकर वह दौड़ी आई। माँ ने रोकर कहा, "देखो तो, जाने कहाँ पूरा हाथ जला लाया है। हाय, क्या करूँ ? क्या लगाऊँ ? आग पड़ी होगी।"

औरत ने देखकर कहा, "भुन गया है बिलकुल। भला आग न पड़ी होगी !"

रामचन्ना रो रहा था। माँ ने गोदी में बैठा लिया, चुप कराने लगी और कातर वाणी से पूछने लगी, "क्या लगाऊँ चाची ? किसी तरह ठंड पड़ जाए।"

औरत ने कहा, "घबराओ मत, मै अभी चली जाती हूँ, मुराब की बारी में केला है, केले का पानी लगाओ, ठीक हो जाएगा।" ...

केले का पानी लगाया, और भी अनेक उपचार किए, पर जलन बन्द न हुई। उस दिन रोटी नहीं बनी। रामचन्ना को बुखार चढ़ आया। उसे दूध पिला दिया। माँ स्वयं निराहार रही ...

रात को जब उसका फूला हाथ देखकर माँ रोने लगी तो रामचन्ना ने रोते-रोते सब घटना सुनाई।

"हाय निरदई।"

माँ ने उसे कलेजे से लगा लिया। अरे, कौन उसके बालक को पकड़कर जबरदस्ती हाथ जलाने को लिए जा रहा है ? गरीब को इतना मत सताओ ! अरे, उसके पास बदला लेने की शक्ति नहीं है, किसी से फ़रियाद नहीं करेगा। दया करो। उसके भी जान है, माया-ममता है।

"हाय हत्यारे !"...

रात को दुकान बढ़ाकर जब गंगासहाय घर पहुँचा तो पत्नी को 'लल्ला' की खाट के पास बैठा पाया। पूछा, "क्या कर रही हो ?"

"मेहँदी लगा रही हूँ तलवों पर।"

गंगासहाय ने अपनी खाट पर लेटकर कहा, "सँभालकर लगाना कहीं उसकी नींद न टूट जाए।"...

... दूर, दूसरे मुहल्ले में अधटूटी खटिया पर लेटा रामचन्ना कराहकर करवट बदलकर बोला, "अम्मा !"

"बेटा... !"

"नींद नहीं आती। बड़ी आग पड़ी है।"

"हाय पुतुआ, मैं क्या करूँ ? कैसे तेरा दुख अपने ऊपर ले लूँ ?"

दर्द से रामचन्ना फिर रोने लगा। उसे कलेजे से लगाकर माँ भी रो उठी। बाकी सब गाँव सो रहा था।

प्रश्न-अभ्यास

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. लड़कों ने रामचन्ना को पहले घोड़ी बनने के लिए क्यों कहा ?
2. पेड़े में हिस्सा नहीं मिलने से रामचन्ना की क्या मनोदशा हुई ?
3. रामचन्ना मिठाइयों की ओर कैसे देख रहा था ?
4. गंगासहाय ने रामचन्ना की ओर देखकर क्या इशारा किया ?
5. रामचन्ना ने अपना नन्हा-सा हाथ कड़ाही में क्यों डाला ?
6. रामचन्ना कड़ाही में से रस क्यों नहीं ले सका ?

निबंधात्मक प्रश्न

1. रामचन्ना से दोस्ती रखने के लिए लल्ला की माँ ने उसे क्यों मना किया ।
2. लल्ला के व्यवहार से उसकी किस प्रवृत्ति का परिचय मिलता है ।
3. इस कहानी में लेखक ने समाज के किस वर्ग पर व्यंग्य किया है ।
4. "किसी से फ़रियाद नहीं करेगा" का आशय स्पष्ट कीजिए ।

बाल शौरि रेड्डी

(जन्म 1928 ई.)

बाल शौरि रेड्डी का जन्म ग्राम मोल्लल गुडर, जिला कण्ण, आंध्र प्रदेश में हुआ। उन्होंने मैट्रिक तक की शिक्षा प्राप्त करने के बाद हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा आयोजित साहित्यरत्न और देवधर द्वारा आयोजित साहित्यालंकार की परीक्षाएँ स्वतंत्र रूप से उत्तीर्ण कीं। उन्होंने दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास में लेखन एवं संपादन कार्य किया। वे काफी दिनों तक बाल मासिक पत्रिका **चंदामामा** के संपादक रहे। **चंदामामा** से अवकाश प्राप्त करने के बाद भारतीय भाषा परिषद्, कलकत्ता में निदेशक नियुक्त हुए। अब स्वतंत्र लेखन करते हैं।

बाल शौरि रेड्डी मूलतः तेलुगुभाषी हैं। उन्होंने हिन्दी में लेखन को अपना कार्यक्षेत्र बनाया। उनकी अब तक पचास से भी अधिक रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं और उनमें से कई पुरस्कृत भी हुई। मौलिक लेखन के अलावा उन्होंने तेलुगु की कुछ रचनाओं का हिन्दी में और हिन्दी की रचनाओं का तेलुगु में अनुवाद किया है।

प्रमुख रचनाएँ

बाल शौरि रेड्डी ने उपन्यास, कहानी और एकांकी के साथ-साथ आलोचना साहित्य भी लिखा है। उनकी प्रमुख कथा साहित्य संबंधी रचनाएँ हैं :

ज़िन्दगी की राह, **शबरी**, **धरती मेरी माँ** आदि उपन्यास तथा **न्याय की कहानियाँ**, **आंध्र की लोककथाएँ**, **दक्षिण की लोककथाएँ** आदि कहानी संग्रह ।

बाल शौरि रेड्डी की भाषा सरल और प्रवाहपूर्ण है । वे अपनी बात पूरी सरलता से कह जाते हैं ।

चाँदी का जूता कहानी का कथ्य भारतीय समाज का कलंक और भारतीय नारी के लिए अभिशाप रूपी दहेज-प्रथा से संबंध रखता है । लेखक के अनुसार नारी जाति की शोषक स्वयं नारी है । वह अपने आदर्शवादी पति को भी दहेज लेने के लिए बाध्य करती है । इस कहानी में लड़की के पिता ने अपने समधी को रुपयों के साथ चाँदी का जूता भेज कर उसको करारी चोट पहुँचाई है । लेखक के मित्र को इस बात का बहुत मलाल है । इस कहानी में कामकाजी महिलाओं के शोषण का भी वर्णन है ।

4

चाँदी का जूता

संयोग की बात थी, मैं जिस दिन अपने वकील मित्र शिवराम के घर पहुँचा, उसी दिन मेरे मित्र के पुत्र की वर्षगाँठ धूमधाम से मनाई जा रही थी। भोज में निमंत्रित व्यक्तियों में वेंकटेश्वर राव को देखकर मेरी बाँछें खिल गईं। उसी समय देखता क्या हूँ, एकदम उछलकर वह मुझसे गले मिले। कुशल-प्रश्नों की बौछार कर दी।

दूसरे दिन प्रातः मित्र का न्योता पाकर नाश्ता करने उसके घर पहुँचा। सर्वप्रथम विलायती व कीमती अलसेशियन सोनी ने हमारा स्वागत इस तरह किया, मानो वह यह जानती हो कि मैं उसके मालिक का अभिन्न मित्र हूँ।

बाथरूम से सर पोंछते हुए वेंकटेश्वर राव सीधे बैठक में आ पहुँचा, पंखा लगाया। अखबार हाथ में थमाकर कपड़े पहनने के लिए शयनकक्ष में चला गया। बैठक इस तरह सजाई गई थी, मानो फ़िल्मी शूटिंग करने के लिए अभी-अभी तैयार किया गया सेट हो। मैं मन-ही-मन अपने मित्र की पत्नी की अलंकार-प्रियता का अभिनंदन करने लगा, साथ ही उससे अपनी घरवाली की तुलना करने लगा। दीवारों पर सुप्रसिद्ध कलाकारों की पेंटिंगें

सुशोभित थीं । सारी बैठक एकदम साफ़-सुथरी और मनमोहक थी । मैं सोचने लगा कि हॉस्टल में रहते वेंकटेश्वर राव कैसा लापरवाह रहा करता था, आज उसकी रुचि में ऐसा भारी परिवर्तन क्योंकर हुआ ! वह सदा अपनी चीज़ें अस्त-व्यस्त रख छोड़ता था । उन्हें करीने से सजाने की उसकी आदत ही न थी । मैं चिढ़कर उसे लाख समझा देता, किंतु उसकी लापरवाही में कोई परिवर्तन न देख हार मान चुका था । कभी-कभी कहा करता था, "यार, तुम्हारी घरवाली ही शायद तुम्हें बदल सकेगी ।" अचानक मुझे स्मरण आया, वेंकटेश्वर राव में तो कोई परिवर्तन न हुआ होगा, उसकी श्रीमती रमा की कला होगी । वाह, रमा तो सौंदर्य की आराधिका होगी ।

"भाई साहब, नमस्ते ! शायद आप रास्ता भूल गए हैं, जो हमारे घर आए !" रमा एक साँस में कह गई ।

मैंने ब्लिट्ज को तिपाई पर रखते हुए दृष्टि उठाई तो देखता क्या हूँ, सामने हाथ जोड़े हँसमुख रमा खड़ी है ।

मैंने उठकर अभिवादन का प्रत्युत्तर दिया । तभी रमा पूछ बैठी, "आप सुरेश की शादी में क्यों नहीं आए ? हमने तो आपका बहुत इंतज़ार किया ।"

– क्या सुरेश की शादी हो गई ? मुझे न्योता कहाँ मिला, जो चला आता । निमंत्रणपत्र तो भेजा नहीं, उलटे मुझ पर दोषारोपण कर रही हो ! वाह, उलटा चोर कोतवाल को डाँटे !

- आप क्या कह रहे हैं ? हमने पहली किश्त में ही आपके नाम पोस्ट कर दिया था ।

– हो सकता है, रमा जी, पर मुझे मिलता, तब न मैं आता ! सच कह रहा हूँ, मेरे नाम कोई निमंत्रण नहीं आया । मैंने अपनी तरफ़ से पूरी सफ़ाई देने की कोशिश की ।

शायद रमा के तर्क के सामने मैं हार बैठता, तभी वेंकटेश्वर राव ने प्रवेश करके मेरी रक्षा की ।

रमा नाश्ते का प्रबंध करने भीतर चली गई । थोड़ी देर बाद भीतर से बुलावा आया । भोजनालय में गुड़िया-जैसी सुंदर कन्या तश्तरियों में मिठाइयाँ सजा रही थी । वेंकटेश्वर राव ने

अपनी बहू का परिचय कराया, "यह सीमा......... मेरी पुत्र-वधू !" जांनते हो, इसने एम. ए. प्रथम श्रेणी में किया है। विश्वविद्यालय-भर में यह प्रथम आई। इसे स्वर्णपदक भी प्राप्त हुआ है। फिर राव ने अपनी पुत्र-वधू से कहा, "बेटी, चाचा को जरा वह पदक तो दिखलाओ।"

सीमा को शायद पदक दिखाना पसंद न था। पर सर झुकाए चाय के प्याले मेज़ पर लगा रही थी। रमा दौड़कर बैठक में गई। अलमारी से पदक लाकर उसने मेरे हाथ में थमा दिया।

– भैया, हमारी बिरादरी में आज तक किसी ने स्वर्णपदक प्राप्त नहीं किया। हमारी सीमा पर हमें गर्व है। यह तो रात-दिन पढ़ती है। पी. एच. डी. भी कर रही है। कहती है कि मैं डी. लिट्. भी करूँगी। मुझे डर है कि रात-दिन जागने पर बहू की तबीयत कहीं बिगड़ न जाए। मैं लाख समझाती हूँ कि बहू, तुम आराम करो, लेकिन हमारी बात सुनती ही नहीं। रसोई बनाती है, खाना परोसती है, ससुर की सेवा करती है, साथ ही कॉलेज में पढ़ाती भी है।

– भाभी, तब कोई रसोइया क्यों नहीं रख लेतीं ? कमाने वाली बहू से काम लेना तो ठीक नहीं है। लोग क्या सोचेंगे ?

– मैं भी यही सोचती हूँ, लेकिन मुझे अपने हाथ का खाना ही अच्छा लगता है। काम भी क्या है ! चार जने हैं। आखिर हमारा भी तो समय कटना चाहिए। काम करने से तबीयत भी अच्छी रहती है।

– रमा, झूठ बोलने की भी हद होती है ! ये पराये थोड़े ही हैं। यार, असली बात यह है कि रमा रसोइए के पीछे खर्च करना बेकार मानती है। मैंने एक-दो नौकर रखे भी, पर कोई-न-कोई बहाना बनाकर इसने भगा दिया।

– तुम सारा दोष मुझ पर मढ़ते हो। तुम्हीं ने तो एक दिन नौकर को किसी काम का नहीं बताया इसलिए मैंने हटा दिया, वरना मेरा क्या जाता है। कमानेवाले तुम हो और खर्चने वाले भी तुम्हीं हो। मैं आराम से बैठ जाती। मुझे क्या पड़ा है, हाथ जलाने को ! रमा खीज उठी।

मैंने बीच-बचाव के खयाल से समझाया, "अपना काम खुद करने में बुरा क्या है। भाभी का समय भी कटेगा और तुम लोगों को बढ़िया खाना भी मिलेगा। जब वह स्वयं खाना बनाने को तैयार हैं, तो तुम रोकने की क्यों सोचते हो ?"

– अगर वह खुद बना ले तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है, मगर बेचारी बहू से सारा दिन काम लेती है। उसे पढ़ने की फ़ुरसत नहीं मिलती। जब वह छह सौ रुपए मासिक कमा कर लाती है तो उसमें से एक सौ रुपए रसोइए के पीछे खर्च करने में क्या हर्ज है। अगर अशिक्षित बहू घर आती तो क्या होता ? मेरे भाई के घर के हालात जानते हो ? पचास हज़ार रुपए दहेज लेकर मैट्रिक पास बहू को घर लाए। वह रानी की तरह बैठी रहती है। परोसने तक का काम नहीं करती ! कोई उसे छोटा-मोटा काम बता दे तो कहती है "मेरे पिताजी ने इसलिए पचास हज़ार रुपए नहीं दिए हैं कि मैं आपके घर बेगारी करूँ वे रुपए बैंक में जमा कर दो। जो ब्याज मिले, उससे नौकर-चाकर रख लो।" आखिर मेरी बहू तो ऐसी नहीं। बेचारी अपना एक भी मिनट आराम करने में नहीं बिताती। समझो कि यह हमारी खुशकिस्मती थी कि ऐसी बहू हमें मिली।

– पति को बहू की तारीफ़ के पुल बाँधते देख रमा से रहा नहीं गया। वह तनकर बोली, "हम ही चाकरी करने के लिए पैदा हो गई हैं न ! मेरे बाप-दादे ज़मींदार थे। हमारे मायके में नौकर-चाकर, गाड़ी-वाड़ी सब कुछ थी। लेकिन मैं यहाँ क्या भोग रही हूँ।"

बात बढ़ते देख मैं वेंकटेश्वर राव के साथ उठकर बैठक में आ गया। वेंकटेश्वर राव ने सिगरेट का केस आगे बढ़ाते हुए कहा, "यार, मैं जानता हूँ, तुमने सिगरेट पीना छोड़ दिया। पर मेरी कसम, तुम एक सिगरेट तो पी लो। ना मत कहो, वरना मुझे दुख होगा।"

मैं उस हालत में राव को अप्रसन्न नहीं करना चाहता था। सिगरेट जलाकर कश लेते हुए सोचने लगा, नाहक राव के घर में क्यों तनाव आ गया !

राव ने ऐश ट्रे लाकर तिपाई पर रखा। मेरी उत्सुकता जगी। वह चाँदी का बना था। उलटे जूते की आकृति का था। इस किस्म का ऐश ट्रे मैंने पहली ही बार देखा था। पूछा, "यार, तुमने इसे कहाँ से खरीदा ?"

राव दार्शनिक की भाँति गंभीर हो गया। फीकी मुसकान उसके चेहरे पर खिल उठी।

– दोस्त, मैं तुमसे क्यों छिपाऊँ ? यह ऐश ट्रे मेरे थोथे आदर्शों का उपहास करनेवाला अविस्मरणीय चिह्न है। तुम जानते हो, हमने कॉलेज में पढ़ते समय शपथ ली थी कि हम भूलकर भी दहेज न लेंगे। यह भी जानते हो हमने अपने विवाह के समय इसका पालन भी किया। पर क्या बताऊँ, जब मेरे पुत्र सुरेश के विवाह का प्रश्न उठा, तब मैंने बिना दहेज के एक मित्र की कन्या का रिश्ता पक्का किया। मेरी श्रीमती को वह रिश्ता पसंद नहीं आया। कई अच्छे परिवारों की लड़कियों के पिताओं ने मेरे घर की अनेक बार परिक्रमाएँ कीं, किंतु देवी रमा उन भक्तों की दक्षिणा पर प्रसन्न नहीं हुई। आखिर मैंने यह रिश्ता तय किया। रमा ने सीमा को देखा। पसंद भी किया। रिश्ता पक्का भी हो गया। निमंत्रणपत्र भी छपे।

विवाह के केवल पंद्रह दिन रह गए थे। रमा सोच रही थी कि सीमा के पिता सिविल सप्लाई अफसर हैं, उसने दोनों हाथों खूब कमाया होगा। बिना माँगे हज़ारों की दक्षिणा मिल जाएगी। आखिर न मालूम कैसे उसके कानों में यह भनक पड़ी कि सीमा के पिता बड़े ही भद्र पुरुष हैं। प्रतिष्ठित भी हैं, पर ईमानदार हैं। उन्होंने कभी रिश्वत नहीं ली है, इसलिए यह विवाह ठाठ से तो करेंगे, किंतु दहेज में एक भी पैसा न देंगे। जब सुंदर, सुशील एवं योग्य कन्या को हम 'कन्यादान' की रस्म अदा कर सौंपते हैं, तो दक्षिणा क्यों चुकाएँ।

मैंने भी कभी सीमा के पिता से दहेज की माँग नहीं की थी। रमा मुझ पर दबाव डालने लगी कि मैं सीमा के पिता से दहेज की रकम की बात पक्की कर लूँ।

आखिर मैं विवश हो गया। झिझकते हुए मैंने सीमा के पिता के कानों में यह बात डाल दी। मैंने सिर्फ़ इतना ही कहा, 'भाई साहब, कई लोग लाख दो लाख रुपयों के दहेज का लोभ दिखाते मेरे घर आए, लेकिन मैंने उन सभी रिश्तों को ठुकरा दिया। मैं सिर्फ़ लड़की को योग्य, सुशील और सुंदर देखना चाहता था। मेरी श्रीमती कुछ और सोचती

हैं । मैं यही कहूँगा कि हम दोनों परिवारों की प्रतिष्ठा को ध्यान में रखते हुए उचित रकम अवश्य दें ।'

ये शब्द कहकर मैं घर लौट आया । वह भले मानुस थे, मुझ पर नाराज भी नहीं हुए । लेकिन मैंने घर लौटकर रमा को सूचना दी कि अच्छी खासी रकम दहेज में मिल जाएगी, तुम फ़िक्र मत करो । विवाह के दिन तक रोज़ वह मुझे तंग करती रही कि तुमने यह क्यों नहीं कहा कि पचास हज़ार रुपयों का दहेज मिलने पर ही हम आपकी कन्या को ब्याहेंगे ।

मैंने एक सप्ताह बाद सुना कि सीमा के पिता ने राइस मिलर्स ऐसोसिएशन के सदस्यों को अपने घर बुलाया था । राइस मिलर्स ऐसोसिएशन ने कन्या को एक बहुत बड़ा चाँदी का बरतन भेंट किया । वही बरतन हमें दहेज में प्राप्त हुआ । मेरी श्रीमती ने विवाह संपन्न होते ही वह बरतन लेकर कमरे में सुरक्षित रख दिया । मुझे अलग से बुलाकर बरतन का ढक्कन खोल दिया । उसकी आँखे विस्मय से चमक उठीं । नोटों के बंडलों से वह बरतन भरा हुआ था ।

रमा ने सारे बंडल ज़मीन पर उड़ेल दिए । उसमें कुल मिलाकर साठ हज़ार एक सौ सोलह रुपए थे । रमा, सीमा के पिता की उदारता की प्रशंसा करती रही । वे सभी नोट एकदम नए थे । मुझे तो डर लगा कि कहीं ये जाली नोट तो नहीं ।

रमा रुपयों के बंडल एक बक्स में सजाने लगी । मैंने बरतन में हाथ डाला, तो कोई चीज हाथ लगी – वह चाँदी का जूता था । मेरे समधी ने वह जूता मेरे सिर पर नहीं, दिल पर मारा था ।

प्रश्न-अभ्यास

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. लेखक को वेंकटेश्वर राव के घर की बैठक को देखकर कैसा लगा ?
2. सीमा की उच्च शिक्षा के बारे में ससुर की क्या राय थी ?

3. वेंकटेश्वर राव के अनुसार बहू में किस प्रकार के गुण होने चाहिए ?
4. शादी में 'राइस मिलर्स ऐसोसिएशन' की ओर से सीमा को क्या भेंट मिली ?
5. बरतन का ढक्कन खोलने पर रमा की आँखें विस्मय से क्यों चमक उठीं ?
6. 'मेरे समधी ने वह जूता मेरे सिर पर नहीं दिल पर मारा था' वेंकटेश्वर राव केइस कथन का आशय क्या है ?
7. लेखक को स्वर्णपदक दिखाने के पीछे रमा की मनोवृत्ति क्या थी ?
8. बेटे की शादी के बारे में सोचते समय वेंकटेश्वर और रमा के चरित्र में क्या अंतर दिखाई पड़ता है ?

निबंधात्मक प्रश्न

1. रमा अपने घर में रसोइया क्यों नहीं रखती ?
2. सीमा के पिता के चरित्र की क्या-क्या विशेषताएँ हैं ?
3. 'चाँदी का जूता' शीर्षक के औचित्य पर प्रकाश डालिए ।
4. दहेज समाज का कलंक है । इस विषय पर पाँच वाक्य लिखिए ।

मेहरुन्निसा परवेज़

(जन्म 1944 ई.)

मेहरुन्निसा परवेज़ का जन्म मध्य प्रदेश के बालाघाट के बहेला ग्राम में हुआ । उन्होंने बी. ए. तक शिक्षा प्राप्त की और उसके बाद लेखन-कार्य में लग गईं ।

प्रारंभ से ही उनमें कहानी लिखने का शौक था । पहली रचना **पाँचवी कब्र** अक्तूबर 1963 की **नई कहानियाँ** पत्रिका में प्रकाशित हुई, जिसका अनुवाद पाँच भाषाओं में हुआ । इस प्रथम रचना से ही उन्होंने प्रसिद्धि प्राप्त कर ली । तब से लगातार कहानियाँ लिखती रही हैं जो विविध भाषाओं की पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं । उनका उपन्यास **उसका घर** मलयालम में भी अनूदित होकर प्रकाशित हो चुका है ।

उनकी सामाजिक कार्यों में भी गहरी रुचि है और वे अनेक साहित्यिक एवं सामाजिक संस्थाओं से संबंध हैं ।

प्रमुख रचनाएँ

उपन्यास – **आँखों की दहलीज़, उसका घर, कोरजा, अकेला पलाश ।**

कहानी-संग्रह – **आदम और हव्वा, टहनियों पर धूप, गलत पुरुष, फाल्गुनी, अंतिम पढ़ाई, सोने का बसर, अयोध्या से वापसी, एक और सैलाब, कोई नहीं, कानी बाट, ढहता कुतुब मीनार, रिश्ते और अम्मा ।**

छोटे मन की कच्ची धूप कहानी में उमा के संघर्षपूर्ण एवं साहसी जीवन की घटनाओं को उभारने का प्रयास कहानी लेखिका ने किया है। उमा का पति एक दिन हवाई जहाज़ की दुर्घटना में मर जाता है। तब उमा अपने बच्चों को लेकर किस प्रकार जीवन निर्वाह करती है, यही इस कहानी का मुख्य विषय है। साथ ही अबोध बच्चों का मनोवैज्ञानिक चित्रण भी सशक्त रूप से कहानी में किया गया है।

5

छोटे मन की कच्ची धूप

सामने सड़क पार कर भूरी बिल्ली पीली कोठी की दीवार पर चढ़ गई। जाती हुई बिल्ली की परछाईं धरती पर पड़ रही थी, जहाँ एक कुत्ता बैठा ध्यान से उस परछाईं को देख रहा था।

निस्तब्धता खुद बौराई-सी लग रही थी। उमा ने अपने शरीर को शाल से अलग किया। दोनों बच्चे अब भी सो रहे थे। वह रास्ता देख रही थी मेरी का, जो अक्सर सात बजकर पैंतीस मिनट तक आ जाती है। कहीं आज फिर उसका शराबी पति घर तो नहीं आया? उसका पति जब घर आता है तो मेरी काम पर नहीं आती। खाना खाकर दोनों मैटिनी शो देखने जाते हैं।

उमा ने पैर नीचे कर स्लीपर पहन लिए। खिड़की से बाहर देखते हुए उसने सोचा – कहीं आज वह नहीं आई तो आज फिर उसे सारे काम निपटाने होंगे।

फ़ार्म का आदमी अब तक अंडे देने नहीं आया। हो सकता है दूसरों के घर बाँटते-बाँटते आज वह लेट हो गया हो।

उसने जाली का पिंजरा खोलकर अन्दर झाँका। अंडे का पैकेट खाली पड़ा था। बस, एक तरफ़ बासी डबलरोटी का आधा टुकड़ा और मक्खन की एक टिकिया ही पड़ी थी।

ओह ! तो उसे बेकरी भी जाना होगा ? सोचते ही उसे मेरी पर गुस्सा आया। क्या वह उसकी मजबूरियों को नहीं समझती। टिंकू को आठ पैंतालीस पर स्कूल जाने को तैयार करना होगा। गाड़ी आती ही होगी।

उसने घड़ी देखी। समय आगे खिसक रहा था। जीवन की यह अनियमितता उसे खलने लगी। पति के जीवन में तो ऐसा नहीं होता था। उस समय हर काम कितना समय पर हो जाता था। उसे इतना भटकना भी नहीं पड़ता था।

पति की याद आते ही उसकी सूनी आँखों में चुभन होने लगी। कैसे पल भर में सब कुछ समेट कर मौत पीछे के रास्ते से चुपचाप निकल गई और वह कुछ भी न कर पाई। केवल ठगी-सी खड़ी रह गई। करती भी क्या ? वह खुद पति को हवाई जहाज़ में बैठा कर आई थी। शायद मौत के पीछे दौड़ती-रोती-चिल्लाती। सावित्री कैसे सत्यवान को मौत के हाथ से निकाल लाई थी ? पर वह तो पति के मरने के दिन को जानती थी, उसने दीवार पर निशान लगा रखे थे। पर उमा को तो कुछ मालूम नहीं था। वह तो खुद पति को मौत के हाथों सौंप कर हाथ झाड़कर छटपटा रही थी। अभी वह वापस घर आने की सोच रही थी कि एक भारी हलचल ने उसे कँपा दिया। जोर-जोर से ऐलान हो रहा था कि अभी जो जहाज़ उड़ा है वह मुश्किल से पंद्रह-बीस मील दूर जाकर ही टकरा गया था और वह बहुत ही टूटे मन से आगे के समाचार जानने के लिए कुछ भयभीत-सी कुछ उत्सुक-सी घर लौट आई थी।

सब कैसे कितनी जल्दी हो गया ! और उस पर आ पड़ी थी दो बच्चों की जिम्मेदारी। बड़े शहरों का अपना जीवन और उस भीड़ को अकेली नापती वह खुद !

कालबेल बजने लगी। वह दरवाज़े की ओर बढ़ी। फार्म का लड़का सफ़ेद ड्रेस में खड़ा था।

'मेम साहब, अंडे।'

अंडे लेते हुए उसका मन काफ़ी हल्का लग रहा था । शायद इसलिए कि अब उसे बेकरी जाना या फोन करना नहीं पड़ेगा ।

दरवाज़ा बिना लगाए ही वह अंडे लिए अंदर आ गई । हीटर का प्लग लगाकर उसने अंडे उबलने रख दिए । वापस दरवाज़ा बंद करने आई तो भूरी बिल्ली पायरी पर लेटी सुबह की धूप सेंक रही थी ।

उमा मुसकराई और उसने बासी बची डबल रोटी का टुकड़ा लाकर उसके सामने डाल दिया । उसने लपक कर टुकड़े को उठाया और अहाते की दीवार फाँद गई । दूर से जाती बिल्ली ऐसी लग रही थी, मानो मुँह में चूहा दबाए जा रही हो ।

लाल छत वाले घर में पेपर वाला घंटी बजा रहा था । दोनों बच्चे जाग रहे थे और देगची में उबलते अंडों को इधर से उधर नाचते देख रहे थे ।

"मामा, हीटर बंद कर दें ?" टिंकू ने पूछा ।

"हाँ, बेटा, समय तो काफ़ी हो गया है ।" उसने दोनों खिड़कियों पर सटी चिक को लपेट कर ऊपर बाँध दिया । कमरे में ढेर सा उजाला फैल गया । खिड़की के सामने से दूध वाले साइकिलों पर तेज़ी से घंटी बजाते जा रहे थे ।

उसने निक्कू को उठाकर ज़मीन पर खड़ा कर दिया । बच्चों के फ्रेश होने तक वह टेबल पर नाश्ता लगाने लगी । पहले यही सुबह कितनी जल्दी की होती थी । जल्दी से उसे ब्रेकफास्ट तैयार करना होता था । पर अब तो समय उसके पास बचा है । भागती हुई जिंदगी मानो सहसा जड़ हो गई है ।

स्कूल की बस सामने सड़क पर खड़ी थी । टिंकू जाते समय उसके पास आया, "मामा, मेरे स्कूल जाते में अगर डैडी आ जाएँ तो फोन कर देना ।"

"हाँ बेटा, जल्दी से फोन कर दूँगी ।"

रोज़ का यही सवाल और टिंकू सड़क की ओर दौड़ रहा था । वह खिड़की से खड़ी उसे देखती रही । पायरी पर अब भी निक्कू खड़ा, जाते हुए भाई को देख रहा था ।

बस जाने पर भी दोनों वहीं खड़े रहे। उमा को फिर वही सवाल परेशान कर रहे थे। दोनों बच्चों के छोटे-छोटे मन में कैसे डैडी के मरने की बड़ी खबर को भरे ? उन्हें कैसे बताए, डैडी कलकत्ता से अब नहीं लौटेंगे। उनके मँगाए उपहार अब डैडी नहीं ला सकेंगे। उसके लिए सबसे बड़ी समस्या आज भी बच्चों को समझाना था और अब तक वह यही नहीं कर पाई थी।

आज भी उमा के लिए समस्या है। उमा ने कभी सोचा भी नहीं था कि इतने छोटे-छोटे मन की समस्या इतनी विकट होगी। उसे याद आया अमरीका के प्रेसीडेण्ट कैनेडी की पत्नी श्रीमती जेकेलिन कैनेडी ने अपने पति के मरने का समाचार बच्चों को सबसे पहले समझाया था और इतनी अच्छी तरह से उनके मन को बाँध दिया था कि बच्चे खुद बड़े ढंग से अपनी आया को समझा रहे थे – "तुम्हें मालूम है। मामा ने बताया, डैडी को एक बहुत बुरे आदमी ने गोली से मार दिया।"

कितने छोटे-से वाक्य में बच्चे अपने मन को सँभाल गए थे। पर वह ऐसा साहस नहीं जुटा पाती। जब वह बच्चों को समझाने के लिए पास बैठती है तो पहले वह खुद रोने लगती है। वह अपने मन को जितना बाँधती है, उतना ही वह बिखरता है और इस बिखरने और समेटने में ही उसके हाथ से वह क्षण भी खो जाता है जिसे वह कई दिनों के प्रत्यनों के बाद तैयार करती है।

निक्कू फर्श पर अकेला बैठा नीचे गिरी माचिस की तीलियों को वापस माचिस में रख रहा था।

टार्च के खाली सैल अलमारी के एक बड़े हिस्से को घेरे हैं। आजकल टार्च का सैल कितनी जल्दी खराब हो जाता है। सड़क का बढ़ता शोर घर की दीवारों से टकराने लगा। उमा ने खिड़की से झाँका, सब्ज़ी वाला ठेले में ढेर सारी सब्ज़ियाँ रखे जा रहा था। उसने उसे पुकारा। निक्कू को उसने गोद में उठा लिया।

"बेटा, मामा खाने में क्या बनाएगी ?"

"गोभी-मटर"

वह हँस दी। सहसा उसे इन सुबहों के पीछे वाली सुबह की याद आ गई जब वह ऐसे ही बच्चों से पूछती तो चट से उसके पति कहते – "गोभी-मटर"। उसने उदासी से भर कर सब्जी वाले को गोभी-मटर दे जाने को कहा। सब्ज़ी वाला तौलकर सब्ज़ियाँ दरवाजे के पास डाली में रख गया। निक्कू डाली उठा लाया – "मामा, सब्ज़ी।"

निक्कू सो गया था। उमा टिंकू का इन्तज़ार कर रही थी। कुकर उसने खोला नहीं था। खुले हुए बाल पीठ को घेरे हुए थे। उसने डायरी उठा ली। वह रोज़ इसी समय डायरी लिखती है। उसे याद है डायरी लिखने की आदत उसको एक मिस ने डाली थी। वह अंग्रेज़ महिला बहुत भावुक थी। हर लड़की को डायरी लिखने को कहती। उसके चले जाने के बहुत बाद उमा को किसी ने बताया था – मिस जिस युवक से प्रेम करती थी, वह लड़ाई में मारा गया था।

डायरी के पन्ने उलटते हुए एक पृष्ठ पर उसकी दृष्टि रुक गई, जिसके एक पूरे पेज पर सिर्फ एक लाईन लिखी थी – "किसका शाप मुझे खा गया।"

वह देर तक इन शब्दों को सहलाती रही – बहुत उदास-सी और एकटक शेल्फ में रखी किताबों को देखती रही। मनीप्लांट की बेल दीवार के आधे भाग को घेरे थी। उसे किसी पुस्तक में पढ़ा वाक्य याद आया, "लोग बड़प्पन का दिखावा करने के लिए मनीप्लांट लगाते हैं।"

उमा को इस टाइम मेरी के आने की उम्मीद थी, क्योंकि वह अक्सर बारह बजे वाला शो देखकर तीन बजे ड्यूटी पर लौट आती थी। मेरी रोज़ की तरह आज भी बहुत खुश रहेगी। उसके मना करने पर बच्चों को चॉकलेट का पैकेट देगी। मेरी यह बच्चों के प्रति ममता दिखाने को करती है या पड़ने वाली डाँट की सिफ़ारिश में यह होता है, वह आज तक समझ नहीं पाई। मेरी शायद दोनों अलग-अलग समय को एक में जोड़ देती है, या घटा देती है। एक में से एक गया शून्य बचा और एक में एक जुड़ा, दो हुआ। घाटा तो शायद कहीं नहीं आया।

उसने रात की आधी जली मोमबत्ती को उठाकर देखा, अभी और काम दे सकती है। उसने बाद में किन्हीं क्षणों के लिए उठाकर रख दिया।

पति के लिए लाए दोनों फ्रेम अभी भी वैसे ही बँधे उसकी अलमारी में पड़े हैं। बच्चों के जन्म-दिन पर बच्चों के नए फोटो उनमें लगा देगी पर सहसा विचार आता है, पति के लिए लाई वस्तु पर किसी भी हालत में दूसरों की परछाईं नहीं पड़ने देगी चाहे वह उसके बच्चे ही क्यों न हों।

मार्टिन लूथर किंग की हत्या का समाचार उसके घाव को कुरेद गया। क्या अच्छे फूल केवल तोड़ने के लिए खिलते हैं ? हर महान आदमी की हत्या होती है। क्या महान बनना या होना अपनी मौत को निमंत्रण देना है ? उसे याद आया, उसने कहानी पढ़ी थी। एक बहुत ही सच्चे ईमानदार आदमी का दरवाज़ा मौत ने खटखटाया। वह आदमी बाहर आया और मौत को देखकर घबराया। उसके मन में घबराहट हुई क्योंकि अभी तो उसके कुछ भी अरमान पूरे नहीं हुए थे। उसने मौत के आगे हाथ-पैर जोड़े तो मौत ने कहा – "मैं इसलिए आई हूँ क्योंकि तुम अच्छे पुरुष हो और अच्छे आदमी को दुनिया में जीने का अधिकार नहीं"।

क्या डा. किंग के दोनों बच्चों ने भी अपनी आया से कहा होगा कि डैडी को बहुत बुरे आदमी ने मार दिया ?

शाम को वह बहुत इत्मीनान से अहाते में बच्चों को क्रिकेट का खेल समझा रही थी। मेरी के आ जाने से वह घर के कामों से फ़ुरसत पा गई है। मेरी का रह-रह कर नई देखी फिल्म का गीत गुनगुनाना सुनाई पड़ रहा है।

'मामा, मेरी फिर गाना गा रही है, पुडिंग में इलायची की जगह गोल मिर्च डाल देगी।' टिंकू चीखता है।

उसे हँसी आ जाती है। टिंकू अपने डैडी की तरह खाने-पीने में रुचि रखता है।

मेरी तार पर धुले कपड़ों को डालते हुए उन लोगों की ओर देखती है। भूरी बिल्ली अहाते की दीवार पर बैठी उनका खेल देख रही है। लाल छत वाले घर के लोग जल्दी-जल्दी सिनेमा के लिए घर से जा रहे हैं। पीली कोठी के सामने एक नीले रंग की

कार खड़ी है जिसकी खिड़की से एक कुत्ता लम्बी जीभ निकाले सड़क पर चुगती मुर्गी को देख रहा है।

रसोई की मोहरी का पानी टमाटर के झाड़ों में जा रहा है। मेरी बार-बार दरवाज़े से निकल कर सड़क की ओर देखती है, फिर लौट आती है। वह शायद दूधवाले को देख रही है। उमा भी सड़क की ओर देखती है। बर्फ़ देने वाला लड़का अभी तक नहीं आया। कल ही तो फैक्टरी में उसने फोन करके अपना पता नोट करवाया था। कहीं वह भूल तो नहीं गया। पर मैनेजर ने तो कहा था कि उसने बर्फ़ बाँटने वाले लड़के की डायरी में उनका पता नोट करवा दिया है। वह बच्चों को खेल में लगाए रखती है, क्योंकि खेल बंद होते ही दोनों दूध माँगेंगे और दूधवाला अभी आया नहीं है।

ठंड का मौसम शुरू हो गया था। धूप में सेंक आ गई थी। पेड़ों पर, अहाते की दीवार पर रंग-बिरंगी सुंदर-सुंदर चिड़ियाँ दिखती हैं। एक बार कहीं उसने पढ़ा था, ठंडे देशों की चिड़ियाँ ठंड के मौसम में दाने-पानी की खोज में भारत आने लगती हैं। टिंकू मेरी के साथ छुट्टियों में अहाते की दीवार के पास गुलाब के झुरमुट के पीछे छुपकर पिंजरे में चिड़ियों को फँसाने में लगा रहता है और निक्कू चारे का डिब्बा पकड़े मेरी के कहने का इंतज़ार करता रहता है कि कब वह कहे और वह चारा डाले।

उमा को आश्चर्य होता है कि यही बँगला, पति की जिंदगी में कितना छोटा लगता था। हमेशा किसी मेहमान के आने पर बच्चों का कमरा खाली करना पड़ता था। पति मेहमान के जाने के बाद कहा करते थे, "उमा, क्यों न पीछे वाला हिस्सा खरीद लें ?" और अब वही घर बड़ा और खाली-खाली लगता है। मेरी भी कई बार कह चुकी है, 'मेम साहब, अकेले बँगले की सफ़ाई नहीं होती। क्यों न आधा हिस्सा किराए पर दे दें।'

वह कइ बार सोचती है, घर को किराए पर उठाकर शिमला चली जाए। भाई के कितने पत्र आ चुके हैं। पर वह बच्चों का ध्यान कर यह विचार छोड़ देती है। कहीं बच्चों के मन में यह बात घर न कर जाए कि वे असहाय से दूसरों के घर जी रहे हैं। वह बच्चों को इसी पुराने वातावरण में रखना चाहती है, ताकि बच्चों के मन में किसी बात का दुख

न हो । वे यह न समझने लगें कि उनसे डैडी और उनका घर ईश्वर ने छीन लिया है । वह इन्हें इसी वातावरण में रखेगी । चाहे यह वातावरण ख़ुद उसको कितना ही पीड़ा देने वाला क्यों न हो ।

मेरी कपड़ों पर आयरन कर रही थी । टिंकू पास बैठा मेरी से उपकार फ़िल्म की कहानी सुन रहा था । उमा ने देखा, मेरी नए जूते पहने थी ।

"अच्छा ! तो उसके डैडी को मार डालते हैं ?"

"हाँ ।"

"फिर... उसकी मामा खूब रोती.......... ।"

"टिंकू, चलो बाहर चलें ।" उमा ने बातचीत का सिलसिला बीच में ही तोड़ दिया । वह दोनों बच्चों को लेकर पायरी पर खड़ी हो जाती है । सामने मैदान में लगे मीना बाज़ार की रोशनी यहाँ से साफ़ दिखती है । वह रोज़ बच्चों को यहीं खड़े होकर घूमती रोशनी दिखाती है ।

प्रश्न-अभ्यास

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. "क्या महान बनना या होना अपनी मौत को निमंत्रण देना है ?" का क्या आशय है ?
2. मौत किस तरह के आदमी को जल्दी उठा लेती है ?
3. पति के न रहने पर उमा को घर बड़ा क्यों लगने लगा है ?
4. नौकरानी मेरी बँगले का आधा हिस्सा किराए पर उठाने की सलाह क्यों देती है ?
5. उमा क्या सोचकर घर किराए पर नहीं उठाती ?
6. उमा से टिकू रोज़ क्या सवाल करता था ?

निबंधात्मक प्रश्न

1. उमा ऐसा क्यों सोचती है कि वही पति को मौत के हाथों में सौंप आई है ?
2. पति की मौत के बाद उमा पर क्या ज़िम्मेदारी आ पड़ी ?
3. रोज़-रोज़ की किन छोटी-छोटी बातों या कामों से पता चलता है कि उमा अधिक भावुक हो गई है ?